देसहरियाणा
साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मंच

ISSN 2454 -6878

वर्ष -7, अंक-33-34 मार्च- जून 2021

सम्पादक

सुभाष चंद्र

यह अंक हमारी वेबसाइट

www.desharyana.in

पर उपलब्ध है।

सम्पादन सहयोगः	अरुण कैहरबा, जयपाल, कृष्ण कुमार, राजकुमार जांगड़ा
सलाहकारः	प्रो. टी.आर.कुंडू, सुरेन्द्रपाल सिंह, परमानंद शास्त्री, अशोक भाटिया, सत्यवीर नाहड़िया, जगदीश आर्य
प्रबंधनः	कीर्ति सैनी, विकास साल्याण, योगेश शर्मा
प्रकाशक:	सत्यशोधक फाउंडेशन, 912, सैक्टर-13, कुरुक्षेत्र -136118
संपर्क :	सुभाष चंद्र - 94164-82156, विकास साल्याण - 90501-82156
ई-मेल :	haryanades@gmail.com
वेबसाइट:	www.desharyana.in

सहयोग राशि

(पंजीकृत डाक खर्च समेत)

आजीवन: पांच हजार रुपए;

वार्षिकः पांच सौ रुपए (संस्था)
तीन सौ (व्यक्तिगत)

एक प्रति: पचास रुपए

आनलाइन भुगतान के लिए

Satya Shodhak Foundation

Indian Bank, Sector-13, Kurukshetra,

A/C No. -50490177180

IFSC - IDIB000K849

प्रकाशित रचनाओं में प्रस्तुत विचार एवं दृष्टिकोण से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।

सम्पादन एवं संचालन अव्यवसायिक एवं अवैतनिक। समस्त कानूनी विवादों का न्याय-क्षेत्र कुरुक्षेत्र न्यायालय।

अनुक्रम

कहानी

ग्रेस ओगोट - हरे पत्ते 6

कविता

जयपाल - 17, ओमप्रकाश करुणेश - 19, अशोक भाटिया 37

महेंद्र सिंह - 38, गोलेंद्र पटेल - 39, गुरदीप भोंसले 42

विरासत

सावित्रीबाई फुले के भाषण 21

आलेख

रविंद्र गासो - गुरु नानक देव जी औऱ जाति का संदर्भ 27

स्वामी अग्निवेश - अंतर-जातीय विवाह से मिटेगा जातिवाद 43

सुरेंद्रपाल सिंह - मनीमाजरा: कहानी एक रियासत की 64

व्यंग्य

कृष्ण महादेविया - ढाकफाही मास्टर 47

सिनेमा-जगत

अमरनाथ - हिन्दी जाति का संगीत और सिनेमा 51

रपट

पूनम तुषामड़ - हाथरस प्रकरण पर तथ्यान्वेषी दल की रिपोर्ट 70

तुम नहीं रहीं,
इसका गम है
पर आगे बढ़ते जायेंगे

चंडीगढ़ में जन्मी विपुला (23/09/1971- 08/01/2021) ने भिवानी से स्कूली शिक्षा, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ से बीएस सी गृह-विज्ञान, भिवानी से बीएड तथा कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से 'खाद्य एवं पोषण' में एम. एससी. की शिक्षा प्राप्त की। शिशुओं के लिए अपना स्कूल स्थापित किया। बाद में राजकीय कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, प्रतापगढ़ (कुरुक्षेत्र) में हरियाणा शिक्षा विभाग में पीजीटी (गृह विज्ञान) के तौर पर योगदान दिया। विद्यार्थियों के साथ उनका गहरा लगाव था। अपने विद्यार्थियों की सृजनात्मक प्रतिभा को निखारने के उपक्रमों में अपनी ऊर्जा लगाती थी। साहित्यिक-सांस्कृतिक विकास के कार्यों से गहरा जुड़ाव था। 'देस हरियाणा' व सत्यशोधक फाउंडेशन की संस्थापकों में थी और समस्त कार्यों में सक्रिय थी। 8 जनवरी, 2021 को हृदयाघात से भौतिक-जगत से विदा हो गई।

विपुला के व्यक्तित्व में एक कलाकार बसता था, जो हर चीज को कलात्मक बनाने की ओर प्रेरित करता था। अपने सृजनात्मक भूख को शांत करने तथा अपने विद्यार्थियों की रचनात्मकता को निखारने के तरीके

ढूंढती रहती। अखबारों-पत्रिकाओं से रंगे-बिरंगे चित्र व ज्ञानवर्धक जीवन उपयोगी सामग्री काटकर फाइलों में रख लेना और अपने विद्यार्थियों के साथ उन पर बात करना उनकी आदत का हिस्सा हो गया था। छात्राएं तो उससे सहेली की तरह बात करती, सलाह लेती। संकोचवश जो बातें वे किसी से भी नहीं कह पातीं, सहजता से अपने सारे 'राज' विपुला को बता देती। कई मां-बाप भी लड़कियों की समस्याओं के प्रति संवेदनशील नहीं होते, उनको बुलाकर समझाती। शिक्षित औरतों के निरे घरेलूपन से बेहद दुखी रहती। औरतों के अखबार न पढ़ने, खबरें न सुनने और राजनीतिक बहस में रुचि न लेने को लेकर बेचैन रहती थी।

किसी विशेष विचारधारा या राजनीतिक पार्टी की भक्त नहीं थी, अपने अनुभव व सहज बुद्धि से सरकार की शिक्षा संबंधी नीतियों की आलोचक थी। अधिकारियों के तुगलकी फरमानों की खिल्ली उड़ाती थी और इन फरमानों को वेद-वाक्य मानने वाले अपने शिक्षक साथियों की आलोचक भी थी।

साहित्य की बहुत अच्छी पाठक थी, जिसका साहित्य की आलोचना वगैरह से कोई सरोकार नहीं था, लेकिन कहानी-उपन्यास को बड़े चाव से पढ़ती थी। साहित्यिक रुचि का ही परिणाम था कि देस हरियाणा पत्रिका की तमाम गतिविधियों में उत्साह से भाग लेती थी। हर बैठक में मौजूद रहती और हर कार्यक्रम में पीछे की पंक्ति में चुपचाप बैठकर विचार सुनती, नाटक देखती।

खुद भी साहित्य में योगदान करने की इच्छा थी। विपुला ने महिलाओं से जुड़ी छः कहानियों की सूची बनाई थी, जिसे वे हिंदी में अनुवाद करना चाहती थी, लेकिन केवल दो का अनुवाद ही कर पाई। इससे पहले इन्हीं पन्नों पर उनके द्वारा अनुदित कहानी हम प्रकाशित कर चुके हैं। ग्रेस ओगोट की कहानी 'द ग्रीन लीव्स' का अनुवाद कर लिया था, लेकिन अपनी तरफ से अंतिम रूप नहीं दिया था। यहां हम बिना

किसी संशोधन के उसी रूप में प्रकाशित कर रहे हैं, जिस रूप में श्रीमती विपुला ने छोड़ा था।

कहानी

हरे पत्ते

□ ग्रेस ओगोट, अनुवाद - विपुला

ग्रेस एमिली ऑग्ट (15 मई 1930 - 18 मार्च 2015) एक केन्याई - लेखक, नर्स, पत्रकार , राजनेता और राजनयिक। चैरिटी वैकिमा वह प्रकाशित होने वाली पहली एंग्लोफोन महिला केन्याई लेखिका थीं। वह संसद के पहले केन्याई सदस्यों में से एक थीं और वह एक सहायक मंत्री बनीं।ओगोट के कामों में स्त्रीत्व और स्त्री की भूमिका दिखाई देती है।

शोर बढ़ता जा रहा था। नायगर ने अपना कम्बल कानों से खिसका कर सुना कि भारी पदचापों की आवाजें ओर करीब आ रही थी। वह अपनी पत्नी नायमुंडे को जगाने के लिए मुड़ा पर वो बिस्तर पर नहीं थी। वह उठकर दरवाजे की ओर भागा। दरवाजा खुला था। उसे आश्चर्य हुआ नायमुंडे कहाँ है। वो कैसे अपने कमरे में चुपचाप चली गई। मैंने उसे कितनी बार कहा है कि मुझे बताए बिना या जगाए बिना न जाया करे। उसे कल देखूँगा।

लगभग तीस गज की दूर से शोर की आवाज और नजदीक आती जा रही थी। "उधर-इधर" नायगर ने अपने सुगठित शरीर पर चादरा लपेटा, नुकीला भाला और मोटा डंडा लेकर घर से बाहर चल दिया।

एक टोला उसके घर के दरवाजे की ओर दौड़ा चला आ रहा था उसने गेट खोला और बाड़ में छिप गया। वह उस टोले से, जो कुछ लोगों का पीछा कर रहा था उनसे एकदम आमना-सामना नहीं करना चाहता था। टोले के जाने के बाद वह भी उनके पीछे हो लिया।

उसे आवाज सुनाई दी, ये हरामी, 'मेरे छः के छः बैल ले गए" चिंता ना करो। उन्हें भुगतना पड़ेगा। दूसरे ने उत्तर दिया। टोले का पीछा करते हुए नायगर जान चुका था कि जो तीन-चार लोग उसके घर के गेट के पास से भागे थे वह सब पशु चोर थे। भागते हुए चोर एक ओर मुड़ गए। टोले में से एक ने चिल्लाते हुए कहा, "वे भागने ने न पाएं। वे बच नहीं सकते। दोनों के बीच का फासला कम हो रहा था। दूज का चांद छिप सा गया था और चारों और घुप्प अंधेरा था।

एक बूढ़े ने चेताया "भाला मत फेंकना यदि चूक गए तो वे इसे हमारे विरुद्ध इस्तेमाल कर सकते है।"

चोर भागते हुए नदी के पुल की ओर न मुड़कर उल्टी दिशा में मुड़ गए। नदी को तैरकर पार करने की कोशिश में भंवर में उलझ गए। फिर जल्दी ही वह उछलकर पानी से बाहर आ गए।

इससे पहले कि चोर नदी को पार करने की सुरक्षित जगह तलाश पाते, टोला उन पर टूट पड़ा। उन्होंने लाठियों से पीट-पीटकर चोरों को अधमरा कर दिया। चारों दिशाएं चोरों की चीखों से गूंज उठी पर टोले ने कोई दया न दिखाई।

इस दौरान उन चोरों में से एक भाग खड़ा हुआ और नदी किनारे उगी घनी झाड़ियों में ओझल हो गया। टोले में से कोई चिल्लाया "पकड़ो-

पकड़ो” तीन आदमी हाँफते हुए चोर के पीछे भागे। झाड़ियां घनी और कांटो भरी थी। पीछा करते आदमी वही खड़े होकर टोह लेने लगे। वहां कोई आवाज सुनाई न दी। डंडों से उन झाड़ियों को पीटते रहे पर फिर भी कोई आवाज सुनाई नहीं दी। चोर वहां से भाग चुका था। दूसरे चोर ने अपना चाकू निकाला और टोले के एक व्यक्ति के कंधें पर घोप दिया, जो जमीन पर गिर पड़ा। इसी दौरान चोर उठ कर भागा और नदी में कूदकर दूसरे किनारे पर पहुंच गया।

नायगर ने अमोरो के कंधे से चाकू निकाला और अपना हाथ घाव पर रख दिया ताकि खून बहना बंद हो सके। अमोरो लड़खड़ाते हुए उठा और नायगर पर झुक गया। रिसता हुआ खून उसकी पीठ को गीला कर रहा था। तीसरा चोर दर्द से कराहते हुए घास पर पड़ा था। दो चोर तो भाग चुके थे। टोले ने उसके सिर पर, छाती पर मार-मारकर अपनी सारी भड़ास निकाली। वह अपने हाथ पैर मारता हुआ बुरी तरह चिल्ला रहा था। अमोरो ने ऊंची आवाज में कहा “हमारे हाथों से कोई दुश्मन मरना नहीं चाहिए। उसकी आत्मा हमारे गांव को शापित कर सकती है। इसे भूत प्रेतों के रहमों करम पर छोड़ दो।”

टोले ने अमोरो की बात सुनकर पेड़ों से हरे पत्ते तोड़कर उसके शरीर को पूरी तरह ढक दिया ताकि कल सुबह पूरा कबीला आकर उसे नदी किनारे दफना देगा।

सभी लोग चुपचाप अपने घरों की ओर लौट चले। अमोरो के कंधे से खून निकलना बंद हो चुका था। वह अपने दोस्तों का सहारा लेते हुए घर वापस पहुंचा। अभी दिन नहीं निकला था पर उनकी आंखें अंधेरे की आदी हो चुकी थी वह सब नायगर के घर तक पहुंच गए, जिसका दरवाजा अभी तक खुला था।

एक व्यक्ति बोला, “कल भोर में जल्दी चलेंगे। हम सब वहां पहले पहुंचे ताकि औरतों को नदी की तरफ जाने से रोक सके।

नायगर अपने घर में घुसा और बाकी सब भी बिना मुड़े चलते चले गए। सारे गांव में खामोशी थी। औरतें उठ चुकी थी परंतु उनमें अपने पतियों के साथ बात करने का साहस नहीं था। उन्होंने सोचा जो भी हुआ उस सबका उन्हें सुबह होने पर पता चल जाएगा। अपने पतियों को सुरक्षित वापस आया देख कर संतुष्ट होकर वे दोबारा सो गई।

नायगर घर पहुंचने पर दवाइयों का थैला ढूंढने लगा जो उसे किनारे पड़ा मिला। थैले में पड़ी एक बांस की डिब्बी निकाली जिसमें पड़ी भस्म को उसने अपनी जीभ पर रखकर निगल लिया। कुछ भस्म उसने अपनी हथेली पर रखकर दरवाजे की ओर फूँक दी। उस बाँस के डिब्बी को थैले में वापिस रख उसने सुख की साँस ली।

वह अपने बेड के किनारे बैठ अपने कपड़े उतारने लगा। तभी उसका विचार बदल गया। उसने बैठने की बजाय वहां से उठकर जाने का विचार बना लिया।

उसने धीरे से दरवाजा खोला और फिर चुपचाप उसे बंद कर दिया ताकि किसी को पता ना चले।

वह दरवाजे पर बिना ठिठके, उसे पार कर गया। उसे आश्चर्य हुआ, "क्या मैंने दरवाजा बंद कर दिया था। उसने पीछे मुड़कर देखा। हाँ, उसने कर दिया या करा हुआ लग रहा है।"

नायगर ने सोचा, "उसकी (चोर की) जेब में बहुत से पैसे होंगे।"

यदा-कदा झिंगुर की आवाज के अलावा रात बहुत शांत थी। भोर होने वाली थी। नए दिन को जन्म देने वाली मध्यम सुनहरी किरणों की रोशनी धरती की गोद से पूर्वी आकाश की ओर आती दिखाई दे रही थी। उसे पता था कि चोर चुराए गए पशुओं को जल्द से जल्द बेचने की फिराक में रहते हैं। कुछ सोचते हुए वह रूका, "बाकी सब तो मूर्ख हैं कि

उसकी तलाशी नहीं ली। क्या कोई आ रहा है? नहीं, कोई नहीं।" वह तो अपने पद चापों की प्रतिध्वनि सुन रहा था।"

उसने चिंतित होकर सोचा, "शायद भागे हुए दोनों चोर भी दोबारा वहीं न आ गए हो। नहीं, वो इतने मूर्ख नहीं हो सकते कि वहीं पर आकर घूमेंगे।"

हरे पत्तों के ढेर पर उसकी नजर पड़ी। उसकी रीढ की हड्डी में झुरझुरी दौड़ पड़ी। उसके दिल की धड़कन बंद जैसे हो गई। उसे महसूस करने के लिए वह रुका। चारों ओर देखा कि कोई आ तो नहीं रहा। उस मृतक के साथ वह बिल्कुल अकेला था। उसे बेचैनी हुई। उसकी अंतरात्मा ने उसे धिक्कारा, "मृत शरीर को क्यों छेड़ रहे हो? तुम इस पैसे का क्या करोगे? तुम्हारी तीन पत्नियां और बारह बच्चे हैं। तुम्हारे पास बहुत से पशु हैं और तुम्हें क्या चाहिए ?" ऐसी आवाजें उसे लगातार सुनती रही और उसे और भी बेचैन कर गई।

"तुम सिर्फ इसके लिए इतनी दूर से आए हो और यह मृत व्यक्ति तुम्हारे सामने पड़ा है। तुम्हें केवल अपना हाथ उसकी जेबों में डालना है और सारा पैसा तुम्हारा होगा।अपने को इतना न समझो कि तुम्हारे पास बहुत धन-दौलत है।इस दुनिया में किसी के पास भी अकूत धन-संपदा नहीं है।"

नायगर उस लाश पर झुका और तेजी से उस पर से पत्ते हटाने लगा। उसका हाथ मृतक की छाती पर पड़े उसके उसके हाथ से छू गया, जो अभी गर्म था। उसमें झुरझुरी सी दौड़ गई और वह तुरंत दूर हट गया। उसने सोचा एक मृतक का शरीर गर्म होना असंभव बात है। फिर भी उसने इस विचार को झटक दिया। शायद वह अब भी परेशान था और लगातार सोच रहा था। वह फिर उस पर झुका और उसको एक ओर लुढ़का दिया। वह मृतक ही लग रहा था।

उसने जल्दी से उसकी जेबें टटोलनी शुरु की। उसने पहली जेब में हाथ डाला जो कि खाली थी। फिर दूसरी टटोली, वह भी खाली थी। उसका मन निराशा से भर गया ।तभी याद आया पशुओं के अधिकतर व्यापारी अपना पैसा अपने गर्दन में बंधी थैली में रखते हैं।

वह लाश के पास घुटनों के बल बैठ गया और उसकी गर्दन टटोलने लगा। उसकी गर्दन पर धागे से बंधी थैली थी ।विजयी मुस्कान उसके होठों पर आ गई। उसके पास चाकू नहीं था, जिससे वह उस धागे को काट लेता। उसने मृतक की गर्दन ऊपर उठाने की सोची। ज्यों ही नायगर ने उसका सिर ऊपर उठाया, त्यों ही उसकी आंख पर एक जोरदार मुक्का पड़ा। वह बेहोश होकर गिर पड़ा।

तभी चोर ने होश संभाला और अभी भी वह कमजोरी महसूस कर रहा था। उसके पास गंवाने के लिए समय नहीं था। दूसरे प्रयास में ही वह अपने पैरों पर उठ खड़ा हुआ। उसका शरीर खून से लथपथ था, पर उसका दिमाग साफ था। उसने सारे हरे पत्ते इकट्ठे किए और नायगर को उनसे ढक दिया ।वह पुल की ओर दौड़ा जिसका वह पहले पता नहीं लगा सका था।

वह जल्दी से वहां से खिसक गया। उजाला होने वाला था। उसे मंगू नदी तक पहुंचना था ताकि अपने कपड़ों से खून धो सके।

सूरज निकलने से पहले, कबीले के सरदार ने 'ओलेगो' ने मातमी धुन में ड्रम बजवाया। एक घंटे में ही कबीले के सौ से अधिक लोग 'ओपेक' पेड़ के नीचे इकट्ठे हो गए, जहां बुजुर्ग लोग पंचायत करके फैसले किया करते थे ।'ओलेगो' ने सभा को संबोधित किया।

मेरे भाइयो, सुनो। आप में से कुछ लोगों ने कल रात की घटना के बारे में सुना होगा। कल रात चोर 'ओमागो' के पशुबाड़े में से छः बैल चुराकर लो गए। इसके बाद चोरों से हुई झड़प में एक चोर मारा गया।

एक व्यक्ति ने पूछा, ऐसा है क्या ?

'ओलेगो' ने कहा, वैसे तो हमारा कानून किसी को भी मारने की इजाजत नहीं देता ।परंतु हम चोरों और अपराधियों को पशु मानते हैं, यदि कोई इनको मारता है तो हत्या का अपराधी नहीं माना जाता। उसे ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जाता है जो समाज को एक बुरी आत्मा से छुटकारा दिलाता है। अपने समाज की सुरक्षा के लिए अपना कर्तव्य पूरा करता है।

अपने कबीले के दूसरे व्यक्ति के साथ दोबारा मिलने से पहले पूर्णतया शुद्धि करवानी पड़ती है। परंतु गोरे लोगों के कानून अलग हैं। उनके कानून के अनुसार तुम्हारे पशु चुराते हुए पकड़े गए चोर या तुम्हारी पत्नी के साथ सोते हुए पकड़े गए व्यक्ति को यदि मार देते हो तो हत्या के अपराधी होगे इसलिए तुम्हें भी मार देना चाहिए। वो सोचते हैं कि उनका कानून हमारे कानून से बेहतर है ।हमें सावधानी बरतनी चाहिए। हमारे पूर्वज थे परंतु इन गोरों के नहीं थे इशलिए वो अपने मृतक जनों को अपने घरों से दूर दफनाते हैं।

"हमें अपने तीस आदमी गोरे लोगों के पास भेजकर बताना चाहिए कि हमने एक चोर को मार दिया है। यह समूह उनको बताएगा कि सारे कबीले ने उस चोर को मारा है। गोरे लोगों की चाल केलव बंटे हुए लोगों पर चलती है। मेरी बात याद रखना मेरे बच्चो। यदि हम सभी इकट्ठे खड़े रहे तो हममें से कोई भी मारा नहीं जाएगा।" उन्होंने कहा - ठीक है। तीस आदमी चुनकर गोरे लोगों के कैंप की तरफ भेज दिए गए।

कुछ औऱ लोग जिनमें कुछ महिलाएं भी थी, इनमें आ मिले। वे सब नदी की तरफ चल पड़े और जहां मृतक चोर की लाश पत्तों से ढकी पड़ी थी ।और गोरे लोगों के आने का इंतजार करने लगे।

नायमुण्डे अपनी सह-पत्नी की ओर आते हुए बोला, "नायगर कहां है। दिख नहीं रहा।"

उसकी पत्नी ने भीड़ की ओर नजर दौड़ा कर देखा और बोली, मुझे लगता है वह उन तीस आदमियों में था जो गोरों के पास गए हैं। जब मैं सुबह उठी तो उनका गेट खुला था। शायद वह घर से जल्दी निकला होगा और गांव से भी।

नायमुण्डे याद करने लगी। नदी की ओर जाने वाली पगडण्डी पर ओंस से भीगी घास पर चलते हुए सह-पत्नी से अपने पति के बारे में पूछना चाहती थी परंतु वह चुप ही रही।

नायमुण्डे ने अपनी सहपत्नी से कहा, "जब हम यहां आ रहे थे तो मुझे उस काली बिल्ली का रास्ता काटना अच्छा नहीं लगा।" हां, सुबह-सुबह काली बिल्ली का रास्ता काटनायह अपसगुन है ।

उन्हें लारी की आवाज सुनाई दी।धूल उड़ाती सिपाहियों से भरी दो लारी वहां आ रही थी।

एक युरोपियन और चार अफ्रीकी अफसर उनसे नीचे उतरे। उन्होंने एक लारी को पीछे से खोला जिसमें से तीस आदमी उतरे जो कबीले की तरफ से पुलिस थाने में गए थे।

गोरे अफसर ने पूछा , "तुम्हारा मुखिया कहां है।"

ओलेगो ने आगे कदम बढ़ाए।

मुझे सच-सच बताओ। क्या हुआ। मैं लोगों की कही-सुनी बातों पर विश्वास नहीं करता। तुमने इनको क्या कहने के लिए भेजा था।

ओलेगो अपनी स्थानीय बोली में स्पष्ट शब्दों में बताने लगा, जिसके एक अफ्रीकी अफसर ने अनुवाद करके गोरे अफसर को बताया।

"मैंने उन्हें यह बताने के लिए भेजा था कि कल रात हमने एक चोर मारा है।"

"क्या ? तुमने एक आदमी मार दिया" - गोरे अफसर ने कहा।

ओलेगो ने दृढ़ता से कहा, "नहीं, हमने एख चोर को मारा।"

"मैंने तुम्हे कितनी बार कहा कि यह मारकाट मत किया करो। कोई भी चोर नहीं कहा जाता जब तक वह कानूनी रूप से अदालत में चोर साबित नहीं हो जाता।परंतु तुम लोग तो बहरे हो।" गोरे अफसर ने अपनी छड़ी से ओलेगो की ओर इशारा करते हुए धमकाते हुए कहा "इस बार मैं तुम्हे दिखाऊंगा किस तरह कानून का पालन किया जाता है। किसने मारा उसे।"

ओलेगो ने भीड़ की ओऱ देखते हुए , "हम सबने।"

"मूर्ख न बनो। सबसे पहले उसे लठ किसने मारा।"

भीड़ बेकाबू होने लगी। उन पांच अफसरों की ओर खतरनाक इरादे से देखने लगी और चिल्लाई, "हम सबने चोर को मारा है। यदि तुम हम सब को गिरफ्तार करना चाहते हो तो कर सकते हो और बेहतर होगा और लारियां मंगवा लो।"

ओलेगो से गोरे अफसर ने पूछा, "वह मृतक कहां है।"

ओलेगो ने पत्तों के ढेर की इशारा करते हुए कहा - " वहां।" पुलिस उस ओर चल पड़ी। भीड़ भी उस ओर चल दी। गोरे लोगों के उसे ले जाने से पहले वे सब उसकी एक झलक देख लेना चाहते थे।

पिछली बार जब इस इलाके में एक आदमी मारा गया था तब पुलिस उसकी लाश को 'किसिमू' (स्थान का नाम) ले गई थी, जहां उसका पोस्टमार्टम किया था। तब उन लोगों को वापस देते हुए कहा था, "ये तुम्हारा आदमी है, इसे दफना दो।" कुछ लोग दावा करते थे कि पित्त की रस निकालकर पुलिस के कुत्तों को दिया जाता था और कुत्ते चोर का घर ढूंढ लेते थे। अधिकांश लोग इन कहानियों पर विश्वास करते थे। उन्हें यह पक्का पता था कि पुलिस वाले इस बार फिर से शव को ले जायेंगे।

यूरोपियन अफसर ने दूसरे पुलिस वाले को मृतक को अनावृत करने के लिए कहा। जो कुछ पल ठहरा और फिर आदेश का पालन किया।

ओलेगो ने शव की ओर देखा औऱ आश्चर्य से भर गया। तब उसने अपने आदमी को देखने के बाद पुलिस की ओर देखा। चोर कहां गया ? उसने दोबारा शव की ओर देखा। उसे विश्वास नहीं हुआ। शव उसके चचेरे भाई नायगर का है।जिसकी दाहिनी आंख में लकड़ी का एक टुकड़ा घुसा हुआ था।

नायमुण्डे भीड़ को चीरते हुए बाहर निकली और शव की ओर दौड़ी। अपने पति की लाश पर गिर कर फूट-फूट कर रोने लगी। फिर भीड़ की ओऱ मुड़कर चिल्लाई, तुमने जिस चोर को मारा वह कहां है ? वह कहां है ?

जैसे-जैसे तनाव बढ़ने लगा, भीड़ दो-दो तीन-तीन में बंट गई। औरतें विलाप करने लगी और आदमी जिन्होंने चोर को मारा था एक-दूसरे को अविश्वास से देखने लगे। इन्होंने नायगर को गांव में छोड़ा था। वे इशकी कसम ले सकते हैं। तब ओलेगो, अपने आंसू भरे चेहरे को बिना छुपाए अपने लोगों से बोले, "मेरे कबीले के लोगो, शैतान ने अपना कहर हम पर डाला है। हमें अपने समाज को तोड़ना नहीं है।यद्यपि नायगर मर चुका है पर उसकी आत्मा हम सबके साथ है।"

परंतु नायमुण्डे ने ओलेगो के आश्वासनों और उन लोगों की कसम पर विशवास नहीं किया, जिंहोंने चोर वाली घटना के बाद नायगर को गांव में वापिस आते देखा था। वह पुलिस वाले से बुरी तरह संघर्ष कर रही थी जो उसके पति की लाश को पोस्टमार्टम के लिए लारी में रखना चाहते थे।एक पुलिस अफसर ने उसे आश्वासन देते हुए वादा किया कि ग्रामीण स्तर पर उसके पति की मृत्यु के कारण की जांच की जाएगी।

परंतु नायमुण्डे ने अपना सिर हिलाते हुए कहा, "मैं तभी मानूंगी यदि तुम उसे फिर जिंदा देने का वादा करो।"

नायमुण्डे ने अपने कपड़े फाड़ डाले व कमर तक नंगी हो गई। गमगीन लोगों की भीड़ के पीछे रोती हुई हाथों को सिर की ओर ले जाकर विलाप करती हुई।

"ओ मेरे प्रियतम,
अपने मां-बाप के प्यारे
बारिश हो रही है
हां बारिश हो रही है।
रातें अंधेरी होंगी।
रातें अंधेरी और लंबी होगी,
ओ, मेरे मां के लाड़े
मेरे पास वो दिल नहीं है जो माफ कर सके
मेरे पास वो दिल नहीं है जो माफ कर सके,
अब, ये सारे गमगीन लोग मुझसे धोखा कर रहे हैं।
हां, ये सब मुझे धोखा दे रहे हैं।
पर जब सूरज ढल जाएगा और रात आएगी,
मुझे सजा देगी,
ठण्डी रात के समय हर औरत अपने आदमी के साथ रमण कर रही होगी।
उन सब में कोई भी, उन सब में कोई भी,
कोई औरत ऐसी न होगी जो अपने आदमी को
मुझे एक दिन के लिए उधार देगी।"
"ओ मेरे प्रियतम,
अपने मां-बाप के प्यारे,
मेरे मां के लाडले

विपुला का हमारे बीच से यूं अचानक चले जाना बहुत ही दुखद है। उनकी स्मृतियों को सहेजती श्रद्धांजलि स्वरूप जयपाल व ओमप्रकाश करूणेश रचित कविताएं यहां प्रस्तुत हैं।

जयपाल

विपुला जी !

विपुला अब नहीं रही
सही है!
पर -
वह अब भी रहेगी परिवार में
जैसे घर में रहती है हवा
आंगन में जैसे आती-जाती धूप
छज्जे से टपकती जैसे बूंदें
ओस या बारिश की

वह रहेगी

देस हरियाणा के पन्नों पर
कविताओं में कहीं छिपी हुई
पत्रिका को सहेजती-समेटती
तवे पर सेकती जैसे रोटी

वह रहेगी
सृजन उत्सव के प्रवेश द्वार पर
स्वागत करते हुए शब्द -कर्मियों का

वह रहेगी
शब्दों के मेले में
शब्दों में अर्थों की तरह
अर्थों में ध्वनियों की तरह

वह रहेगी
सृजन उत्सव में/घर परिवार में
यहां-वहां / कहीं भी / किसी कोने में
फसलों में जैसे चिड़िया

दो रास्ते हैं

पहला-
घर के सारे दरवाजे अंदर से बंद कर दिए जाएं
और अंदर ही बंद रहा जाए

दूसरा-
घर के सारे दरवाजे बाहर से बंद कर दिए जाएं
और बाहर ही रहा जाए

एक तीसरा रास्ता भी है -
अंदर बाहर के सारे दरवाजे खोल दिए जाएं
आप अपने काम पर जाएं
बच्चे अपने काम पर
और फिर लौट आएं
उसी खुले घर में

जैसे आती-जाती थी
आपकी सहचरी विपुला
यही एक रास्ता है अब

ओमप्रकाश करुणेश

हिल गया आलणा

वह केवल स्त्री नहीं थी
मुकम्मल जीवन थी
मां-बाप की बहुत ही प्यारी बेटी
उनके सुख-दुःख का हिस्सा
घर के आंगन की बगीची में खिला फूल
इठलाता, चहकता, और दौड़ता जीवन थी
पति की भुजाओं की ताकत
दिल में प्रेम और तुफां के हिल्लोरें
बच्चों को अपने आलणे में
अण्डों सा सेती
खिलखिलाकर मुस्कराता
रूठता, मान-मन्नोवल

किलकारियों का सफर थी वह
जो पूरा नहीं हुआ था अभी
तिनका-तिनका बुने आलणे को
हिण्डोले की तरह हिला गई
बीच अधर हिलता हुआ
यह आलणा अभी तो जड़वत है
और मितर-प्यारे अब कैसे देख रहे है!
ठगे-से निस्तेज हुए, निराश, हताश, बुझे हुए
फिलहाल!
हम सब उड़ गई चिड़िया को
उसकी चहचहाटों को
स्मृतियों के आटे में गूंथ रहे हैं
और ताजा बनी रोटियों की
सुगंध में महसूस रहे हैं

चोंच भर चिड़िया
फिर लायेगी दाना-दुनका
और आस में हैं हम
चहक उठेगा डाल पर हिलता
हमारा यह आलणा

सावित्रीबाई फुले के भाषण

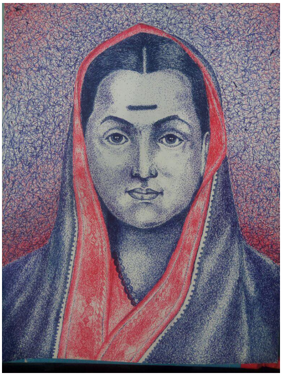

उद्योग

उद्योग का अर्थ है, हमेशा मेहनत करने का यत्न करना। इसके अंतर्गत विद्या प्राप्त करना, फसल उगाना, व्यापार-धंधा करना जिससे अपनी जीविका चले और दूसरों की जीविका में सहायक हो। समस्त मनुष्यों के सुख के लिए उद्योग-धंधे इसमें आते हैं जिनसे मनुष्य को मानसिक संतुष्टि मिलती है। पैसा मनुष्य के सुख में वृद्धि करने का एक प्रमुख साधन है और उसकी जरूरत सभी मनुष्यों को पड़ती है। सभी जानते हैं कि इसके लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती है। आलसी मनुष्य ही सोच सकता है कि "खाट पर पड़े-पड़े ही ईश्वर दे दे" या "पेड़ के नीचे लेटे हुए के हाथों के नजदीक पड़े हुए जामुन को उठाकर कोई मुंह में डाल दे"। दिन भर अनथक मेहनत करना मनुष्य का परमधर्म है और वही मनुष्य का सच्चा हितैषी मित्र है। सब इस बात की गांठ बांध लो कि दुनिया में इसके सिवाय हमारा भला करने वाला कोई मित्र नहीं है।

यह मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकती हूं कि यही मित्र हमारी जीविका कमाने और हमारे सुखों की बढ़ोतरी करने के लिए उस पर

यकीन करें तो यह हमेशा हमारे लिए उपयोगी है। बहुत लोग ऐसा समझते हैं कि भगवान एक अदृश् सहायता करता है। परंतु यह सहायताकर्त्ता सत्य नहीं है, यह विश्वसनीय नहीं है, वह मनुष्यों और मेहनत में भेदभाव करके उनमें शत्रुता पैदा करता है मनुष्यों को आलसी बनाता है। खुद के अच्छे-बुरे कार्यों से मनुष्य की परिस्थितियां बनती है उसी से सुख-दुख की प्राप्त होते है।

इस भाग्य की कल्पना के अनुसार महार, मांग, कुणबी, मराठा इन सभी जातियों के लोग निम्न ठहराए गए, हजारों वर्षों से ये निम्न ही रहे। ज्ञानवान और धनवान लोगों के भगवान को वे सुखी नहीं कर सकते, लोगों के पूर्व संचित कर्मों में हस्तक्षेप भी नहीं कर सकते। उसे दुखी के जीवन में हस्तक्षेप करने में दिक्कत होती है, इस कारण शूद्र-अतिशूद्र लोगों द्वारा पूर्वसंचित कर्मों का फल समझकर पशुओं से भी बदतर जीवन जीते हैं संसार में वे इसीलिए आए हैं ऐसा मानकर वे जी रहे हैं। वे भूल गए हैं कि वे भी इंसान हैं इसलिए पशुओं की तरह गुलामी करते हुए मेहनत करते हैं।

उनके परिश्रम में ज्ञान नहीं है, पशुओं की तरह मेहनत है, इसलिए वह उनके सिर्फ जिंदा रहने में सहायक है। अतः उद्योग दो तरह के होते हैं। एक सोच-विचार से किया हुआ उद्योग और दूसरा बिना सोचे-विचारे किया गया उद्योग। अध्ययन करना भी एक उद्योग है। इसमें आंख, कान और बुद्धि इन इन्द्रियों की जरूरत पड़ती है। "माई इस गरीब को टुकड़ा दे दे" ऐसे चिल्लाकर भीख मांगना भी एक उद्योग है परंतु यह विचारहीन उद्योग माना गया है। हाथ-पैर से किए जाने वाले उद्योग में बुद्धि की मदद की जरूरत होती है। मनुष्य मानसिक और शारीरिक श्रम से उत्तम परिणाम प्राप्त करना चाहता है, यह विचार करते हुए बुद्धि थककर फिरकी की तरह घूमने लगती है। यूरोप के लोगों ने उद्योग करके घड़ियां, दूरबीन, स्टीमर, भाप चालित रेलगाड़ी, कारखाने चारों तरफ उद्योग शुरु

किए। उनके ये उद्योग उनकी अदभुत बौद्धिक शक्ति का नतीजा हैं। इनका उपयोग इंसानियत बढ़ाने की दिशा में हो परम्परागत रूप से अज्ञान के अंधेरे में भटकने वाले शूद्रों-अतिशूद्रों को उद्योगों में प्रवृत्त करने से होगा, इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं होना चाहिए।

यूरोपियन लोग देवताओं पर विश्वास रखने वाले होते तो वे इस तरह के अद्भुत कार्य न कर पाते। उनके उद्योगों में समय का बड़ा महत्व हैं, वे कोई भी काम फटाफट करते हैं, अपने जीवन के एक-एक पल का हिसाब रखते हैं, अंग्रेज लोग भी पहले जंगली ही थे, परंतु रोमनों की संगति से वे उद्योगी बने। इससे उनका देश उद्योगों का भंडार बन गया, उन लोगों के प्रगति के कदम आगे ही आगे बढ़ते गए, वे विद्या, कला और उद्योगधंधों में अग्रणी हो गए। हमारे देश में थोड़े-से अंग्रेज व्यापार करने के लिए आए थे और उन्होंने एक बड़े भारी राज की स्थापना कर ली। यह उनके दृढ़ उद्योगी होने और बौद्धिक शक्ति का चमत्कार है। इसका भाग्य से कोई संबंध नहीं है। दैव और नियति पर विश्वास रखनेवाले लोग आलसी और भिखारी होते हैं और उनका देश हमेशा दूसरों की गुलामी में ही रहता है, इसका स्पष्ट उदाहरण तो हमारा हिंदुस्तान ही है।

यूरोपियन लोग कहते हैं कि दो हजार वर्ष पहले इस देश ने बहुत प्रगति की थी, यहां के लोग उद्यमी और ज्ञानी थे। परंतु ईरानी, हूण, तातार लोगों जिनके नाम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य थे और उन्होंने ही यहां की प्रगति का विनाश किया। यहां के लोगों को शूद्र, अतिशूद्र बनाया उनको देवी-देवताओं के झमेले में फंसा दिया और भाग्य के भरोसे रहना सिखाया। इन द्विजों के आने से यहां के लोगों का अधोपतन हुआ वे पशुतुल्य बन गए। लेकिन अंग्रेजों के आगमन से यहां के शूद्रों-अतिशूद्रों में धीरे-धीरे शिक्षा का चसक लगी इसकारण धीरे-धीरे उनके कदम उद्योगों की ओर उठे। इससे हम सारे शूद्र अतिशूद्र लोग पशु-जीवन से सच्चे इंसानी जीवन की तरफ बढ़ते जा रहे हैं, हम ऐसा अनुमान लगा सकते हैं। उद्योग

ज्ञानस्वरूप है और आलस्य भाग्य का साथी है। उद्योगी मनुष्य अपना सुख बढ़ाते हुए दूसरों को सुखी करने का प्रयत्न करता है। इसके विपरीत आलसी मनुष्य सदा दुखी रहता है और लोगों के सुखों को नष्ट करने के कार्य करता है। आलस दरिद्रता का लक्षण है। ज्ञान, धन और सम्मान का शत्रु है, आलसी मनुष्य को ये तीनों कभी हासिल नहीं होते। इस प्रकार इतनी हानि होती है, उनसे मानवता भी दूर हो जाती है। इस तरह आलस का अवगुण मनुष्य की बुरी स्थिति बना देता है। इसलिए उद्योग करते रहना ही मनुष्य का प्राथमिक काम है। मैं निश्चयपूर्वक कह सकती हूं कि वह उसी से सुखी हो सकता है। यह अच्छी बात है कि अंग्रेज सरकार शूद्रों और अतिशूद्रों को ज्ञान देकर उद्योगी बनाने का प्रयास कर रही है, इसके लिए हमें सरकार का आभार मानना चाहिए। सरकार को क्या करना चाहिए, इसका मैंने सरकार को प्रस्ताव दिया है।

***

कर्ज

"कर्ज लेकर मौज उड़ाना" इस उक्ति में गूढ़ अर्थ छिपा हुआ है। इससे बड़ा हमें ज्ञान और बुद्धिमानी की सीख मिलती है। कर्ज लेकर ऐश उड़ाना और कर्ज की गिरफ्त में फंसकर अपनी दुनिया को ग्रहण लगाने में क्या समझदारी है? जीवन में हर व्यक्ति को किसी न किसी जरूरत में कर्ज लेना पड़ता है। परंतु कर्जदार को बहुत दुख झेलना पड़ता है। अनेक बार अपमान, मुश्किलें सहनी पड़ती हैं। कर्जे के कारोबार में सबके अनुभव एक समान हैं और सभी का यही मत है कि “समझदारी इसी में है कर्ज ना लें”। यह लंबे अनुभव का निचोड़ है। हर गांव में कर्जदार लोग हैं, वे कोई काम धंधा नहीं करते। वे आलसी हैं। उनमें ये सोच नहीं होती कि हम कुछ न कुछ काम करें और परिवार की मदद करें।

वे सोचते हैं कि निठल्ले रहने से ही सुख मिलेगा और जब नहीं मिलता है तो फिर वे दूसरों को दोष देने लगते हैं और अपने खुद के निकम्मेपन पर नजर नहीं डालते। जो लोग कर्ज ले लेते हैं, वे परिश्रम, चातुर्य, हिम्मत, बुद्धि, पराक्रम, उत्साह इन छः गुणों को खो देते हैं। इसलिए सावित्री कहती हैं

सेठ से जो कर्ज लेता
उसका सुख दूर भागता।
संकटों से हैरान होता ।
कर्जदार बेचैन रहता।

कर्ज से चिंता रहती।
सारी संपति लुटा दी।
जीवन की उलझनें बढ़े।
ऋणकों का अहं बढ़े।

कर्ज लेना अनर्थों का मूल है, वे खुद अपना दिवाला कैसे निकालते हैं यह उदाहरण है -

एक गांव में दो कुणबी अपने ही गांव के निकट सरकार के खेतों में खेती करके परिवार के साथ मजे से रहते थे। एक का नाम खंडोबा था और दूसरे का पिरोबा। दोनों के ही प्यारे-प्यारे बेटे थे। किशोर उम्र की बेटियां थीं। दोनों का जीवन सुख से बीत रहा था। दोनों परिवार आनंद से रह रहे थे। गांव में उनकी बहुत इज्जत थी।

एक बार उस गांव में एक परदेशी व्यक्ति आया। उस समय उसकी कुल दौलत थी - फटी-पुरानी जूती, फूटा लोटा, पैबंद लगी बंडी, लीर जोड़-जोड़कर बनाई धोती। उसकी यह हालत देखकर खंडोबा, पिरोबा को उस पर दया आ गई। उन्होंने उसके लिए छोटा-सा घर बनवा दिया।

कुछ पैसे देकर उसकी दुकान खुलवा दी। कुछ दिनों बाद वह गरीब आदमी अपनी व्यापार-विद्या से गांव के लोगों को डेढ़-दो गुणा ब्याज पर कर्ज देकर घर की चीजें गिरवी रखवा लेता। इस तरह हजारों रुपए कमाकर सेठ बन गया। एक बार खंडोबा-पिरोबा ने इसी सेठ से पांच-पांच सौ रुपए कर्ज लेकर लड़कियों का विवाह कर दिया। दो-तीन साल तक खाता चलता रहा। चक्रवृद्धि ब्याज के हिसाब से सेठजी ने दोनों से 500 रुपए के बदले डेढ़ हजार रुपए वसूल कर लिए। दोनों हर साल खेतों में जो भी पैदा होता दोनों जन कर्ज चुकाने के लिए सेठजी को दे देते थे। लेकिन उसे बही-खाते में जमा नहीं किया । कर्ज, उसका ब्याज और उस पर चक्रवृद्धि ब्याज का चक्र थमता नहीं था। इससे परेशान होकर खंडोबा और पिरोबा सेठजी से लड़ने लगे। सेठजी ने अदालत में फरियाद की, उसका फैसला सेठजी के पक्ष में हुआ। उसने दोनों की ज़मीन पर सार्वजनिक नीलामी करवाके अपना सारा पैसा वसूल कर लिया। तब वे दोनों कुनबी अपना गांव छोड़कर परिवार के साथ परदेश में चले गए। इससे सेठजी को तिल भर भी दुख महसूस नहीं हुआ। खंडोबा-पिरोबा की कहानी बताती है कि कर्जे की वजह से लोगों को अपना गांव छोड़ना पड़ता है।

धरती का गीत

धरती की मिट्टी, रंग-बिरंगी
काली-सफेद, खेतों में।

काली मिट्टी में लहलहाती है फसल
फल-पौधे खिलते हैं, खेतों में।

सफेद मिट्टी को रौंदकर करे कुम्हार कोमल
ईंट और कवेलू को भट्टी में तपाकर
घर बनाते हम, खेतों में।

मिट्टी की महिमा कैसे बताऊं ?
मिट्टी से नाता हमारा, खेत-खलियानों जैसा।

-सावित्री बाई फुले

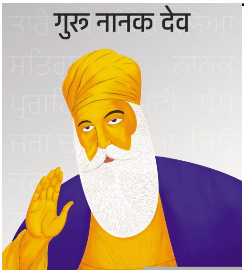

गुरु नानक देव जी और 'जाति' के सवाल

□ डॉ. रविन्द्र गासो

गुरु नानक देव जी सिक्ख-पंथ के प्रवर्तक प्रथम गुरु हैं। आप का व्यक्तित्व और विचारधारा पंथ, प्रान्त, देश या किसी एक धर्म की सीमा में बंधा हुआ नहीं है। आप महान मानवतावादी युग-द्रष्टा और युग-स्रष्टा विलक्षण सन्त थे। आपका जन्म 15.04.1469 ईस्वी (03 बैसाख सुदी 1526 विक्रमी) को लाहौर से कुछ दूर राय भोए की तलवंडी (अब ननकाना साहिब, पाकिस्तान) गांव में हुआ था। माता जी का नाम तृप्ता और पिता जी का नाम मेहता कालू चन्द (कल्याणदास) था। 22.09.1539 ईस्वी (23 आश्विन, 1596 विक्रमी संवत) को आपका देहान्त हुआ था। प्रारम्भिक 27 वर्ष आप गृहस्थ जीवन में रहे। संस्कृत, फारसी, पुरातन विद्या, हिसाब-किताब, राजस्व आदि की शिक्षा ली। सुलतानपुर लोधी में बहन नानकी के ससुराल में नवाब के मोदीखाने के कारदार रहे। पत्नी का नाम बीबी सुलखनी जी था। बहन का नाम नानकी (गुरु जी की सबसे प्रिय) और जीजा भाई जय राम जी थे। दो पुत्र श्रीचन्द (जन्म 1494 ई.), लखमी चन्द (जन्म 1496 ई.) थे। बड़े पुत्र श्री चन्द उदासीन सम्प्रदाय के संस्थापक हुए लेकिन नानक जी ने उन्हें अपना उत्तराधिकारी बनाने के योग्य नहीं पाया।

गुरु जी ने 25 वर्ष बड़ी यात्राओं (उदासियों) द्वारा बगदाद (ईरान) से लेकर ढाका (बांग्ला देश) तक काश्मीर से लेकर श्रीलंका तक का भ्रमण किया। सभी धर्मो-मतों के विद्वानों के साथ संवाद किया।

अन्तिम 18 वर्ष करतारपुर, रावी नदी के तट पर स्वयं बसाए गांव में रहे। यहीं पर 'किरत करो (श्रम करो) - वंड छको (बांट कर खाओ) - नाम जपो' के सिद्धान्त पर आधारित सिक्ख-पंथ का प्रवर्तन किया। लंगर-प्रथा का महान संकल्प संगत और पंगत (पंक्ति में सब बराबर) के सिद्धान्त पर स्थापित किया। करतारपुर में ही अपनी समस्त वाणी को मौखिक से लिखित रूप दिया। 15 अन्य सन्तों की चुनिंदा रचनाओं को मिलाकर गुरु जी ने अपनी वाणी की 'पोथी' बनाई जो द्वितीय गुरु अंगद देव जी को सौंपकर अपनी सोच और विचारधारा को मानवता के कल्याण हेतु सुरक्षित, संरक्षित और संपादित करने का ऐतिहासिक कार्य किया। यही वाणी पाँचवें गुरु श्री गुरु अर्जुन देव जी द्वारा 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' में संकलित की गई अन्य चार गुरुओं व भक्तों की वाणी सहित। फिर दसवें गुरु श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी ने 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' को पुनः संपादित कर उसमें गुरु तेग बहादुर जी की वाणी को शामिल किया और इसे 'प्रकट गुरु' की उपाधि दी।

गुरु नानक देव जी की समस्त वाणी 19 रागों में है। जपुजी साहब, सिध गोसटि, सोदर, सोहिला, आरती, रामकली, दखणी ओअंकार, आसा दी वार, मलहार ते माझ की वार, पटी, बारहमाहा आदि - यह है नानक वाणी। उनकी वाणी कुल 974 पदों में है।

नानक जी की सोच की बुनियाद धर्म-निरपेक्ष और जाति-प्रथा उन्मूलन की रही है। आपने हिन्दू-मुस्लिम सब को बराबर समझा। उन्हें पहला इल्हाम सुलतानपुर लोधी में वेईं नदी में जो हुआ था वह सन्देश है - 'न कोई हिन्दु है, न कोई मुसलमान है।' यह प्राणी-मात्र को अकाल पुरख प्रभु की रचना मानने का घोष है। सम्पूर्ण जीवन व विचारधारा में कहीं भी कभी भी गुरु नानक देव जी ने हिन्दू-मुसलमान में और जाति आधारित भेद नहीं किया।

'जाति' व्यवस्था के सवाल को उन्होंने वैचारिक और व्यवहारिक रूप में आत्मीय दृढ़ता से सम्बोधित किया। उन्होंने 'जाति' के आधार पर किसी भी भेदभाव को स्वीकार नहीं किया बल्कि समाज में कथित रूप से 'नीच' कहे जाने वाले और उन 'तथाकथित नीचों' में भी 'अत्यन्त नीच' की पक्षधरता का स्पष्ट निर्देश दिया। सभी मनुष्यों को एक समान मानने की उनकी कथनी और करनी एक थी। उन्होंने मनुष्य को उसके जन्म के आधार या जाति-धर्म के आधार की बजाय कर्मों के आधार पर देखने का सन्देश दिया। उनका मत था - 'ईश्वर की दृष्टि में कोई उत्तम-नीच या मध्यम श्रेणी नहीं, सब बराबर हैं। ईश्वर स्वयं जाति, कुल या वर्ग से रहित है।'

'जाति' का सवाल भारतीय समाज के अध्ययन के लिए बुनियादी सवाल है। भारतीय समाज, संस्कृति का समाज-शास्त्रीय व अन्य किसी भी कोण से अध्ययन सही परिणाम तभी देगा जब 'जाति' व 'वर्ण' के सवाल को समूचे संदर्भों और परिप्रेक्ष्य में समझा जायेगा।

'जाति' जन्म आधारित ऐसी व्यवस्था है जो सहज विकास में बाधक है और निर्योग्यताएँ थोपने का काम करती है। ऊँच-नीच, असमानता, अस्पृश्यता, शोषण, अत्याचार पर टिकी इस व्यवस्था को गुरु नानक देव जी ने चुनौती दी और पीड़ित-शोषित वर्ग के साथ पक्षधरता का क्रान्तिकारी दर्शन दिया -

'नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु।
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस।
जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस।'

टीका:- जो जाति नीचों से नीच है और उन नीच जातियों में जो सबसे अधिक नीच गिनी जाती है। नानक उनका साथी बनना चाहता है। (मायाधारियों का नहीं) मायाधारियों का अनुकरण करके वह उनके समान जीवन व्यतीत नहीं करना चाहता है। जहाँ नीचों की सेवा होती

है, प्रभु की कृपा भी वहीं होती है।

(गुरु नानक वाणी प्रकाश (भाग पहला); हिन्दी में; डॉ. तारन सिंह; संस्करण मई 1986; पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला; पृ॰ 79-80)

भारत के सामाजिक इतिहास में यह एक महान, साहसिक, अभूतपूर्व, क्रान्तिकारी विचारथा।इसकी गूंज सांस्कृतिक-रूपान्तरण के गुरु नानक मॉडल में बहुत ऊँची है।

यज्ञोपवीत की घटना का सन्देश -

यज्ञोपवीत की घटना गुरु नानक देव जी के 'जाति' सम्बन्धी विचारों का बहुत सार्थक प्रसंग है। ग्यारह वर्ष की आयु में कुल पुरोहित पंडित हरदयाल जब विशेष समारोह में उन्हें जनेऊ धारण करवाने लगे तब गुरु नानक देव जी ने उनसे सवाल किया कि इस धागे से वे क्या करने लगे हैं? पण्डित जी ने उत्तर दिया कि 'यह पवित्र धागा यज्ञोपवीत है। इससे मैं तुम्हारे द्विज (अर्थात् दो बार जन्म) अर्थात् ऊँची जाति का निशान लगा रहा हूँ।' गुरु जी ने कहा कि 'इस तरह के निशान से मनुष्यों में भेद कैसे किया जा सकता है? उनका वर्गीकरण तो कर्मों से ही हो सकता है। मैंने नहीं लेना ऐसा निशान। वैसे भी यह धागा तो मैला होकर टूट जायेगा। अन्तर्मुखी व मृदुभाषी बालक की यह दृढ़ता निश्चय ही चकित करने वाली थी। इस प्रसंग में रचित गुरु जी का श्लोक अनुपम है-

दइया कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु।।
एहु जनेऊ जीअ का हई त पांडे घतु।।
न एहु तुटै न मलु लगै ना एहु जलै न जाइ।।
धन सु माणस नानका जो गलि चले पाइ।।

अर्थात दया रूपी कपास हो, सन्तोष रूपी सूत हो, संयम रूपी गांठें हों और सत्य के ऐंठन हों। यह जनेऊ आत्मा के काम आने वाला है। हे पांडे! यदि तेरे पास यह जनेऊ है तो मेरे (गले में) डाल दे। यह जनेऊ न टूटेगा, न मैला होगा, न जलेगा, न नष्ट होगा। (नानक) वे

मनुष्य धन्य हैं जो ऐसा जनेऊ गले में डालकर यहां से चले जाते हैं।

(गुरु नानक वाणी प्रकाश (भाग पहला); डॉ. तारन सिंह; पंजाबी युनिवर्सिटी, पटियाला; हिन्दी में पहली पोथी (संस्करण) 7 मई 1986; पृ॰ 581-82)

गुरु नानक देवी जी ने कर्मों को, आचार-व्यवहार को, चरित्र को सबसे बड़ा महत्त्व दिया। उन्होंने 'जाति' के आधार को कर्मों के साथ जोड़कर देखा। जन्म के आधार पर स्वयं को उच्च जाति के होने के 'अहं' को गुरु जी ने व्यर्थ कहा है। आत्मिक-शक्ति, दया, सन्तोष, संयम, सत्य के आन्तरिक गुणों वाला जनेऊ ही वास्तव में न टूटता है, न मैला होता है, न जलता है, न नष्ट होता है। (ना एहु तुटै न मलु लगै न एहु जले न जाई)। चरित्रहीन, दुराचारी, झूठे, गालियां बकने वाले, चोरियां करने वाले, जार-कर्म करने वाले, धोखेबाजी और लाखों पाप छिप-छिप कर रात-दिन करने वाले लोगों को ब्राह्मण आकर जनेऊ पहनाता है। ऐसे समारोह में मेहमानों को बकरा मारकर, पकाकर खिलाया जाता है। गुरु नानक देव जी ने इन सब को व्यर्थ और नश्वर कहा-

लख चोरीआ लख जारीआ लख कूड़ीआ लख गालि।
लख ठगीआ पहिनामीआ राति दिवसु जीअ नालि।

(गुरु नानक वाणी प्रकाश (भाग पहला; हिन्दी में, पृ॰ 582)

कर्म को जाति का आधार बताकर 'जाति-व्यवस्था' को न्यायोचित बताने वाले भी बहुत हैं। लेकिन गुरु नानक देव जी ने इन्सान की बुरी प्रवृत्तियों को जिस तरह प्रस्तुत किया है, वह नायाब उदाहरण है कर्मों के आकलन की। जो यह बताने के लिए पर्याप्त है कि 'जाति' जन्म के आधार पर तो त्याज्य है ही, कर्मों के आधार पर भी 'जाति' की कोई वैज्ञानिक, तार्किक व्याख्या हो ही नहीं सकती क्योंकि किसी भी मनुष्य के गुण स्थिर नहीं होते और एक ही समय में उसमें चारों वर्णों के गुण मौजूद हो सकते हैं। और फिर किस वर्ण का कौन-सा गुण (ब्राह्मण वाला, क्षत्रिय वाला, वैश्य वाला या शूद्र वाला गुण) प्रमुख हो जाये और कौन-सा गौण - इसका मूल्यांकन कठिन ही नहीं असंभव है। वैसे भी इन्सान के

मनोविज्ञान को समझने का काम बहुत कठिन है। लोभ, मिथ्य-भाषण, ठगी, परनिंदा, क्रोध, आत्म-प्रशंसा आदि दुर्गुणों की उपमा द्रष्टव्य है -

'लबु कुता, कूड़ चूहड़ा ठगि खाधा मुरदारु।
पर निंदा पर मलु मुखि सुधी, अगनि क्रोध चंडालु।
रस कस आपुसलाहणा ए करम मेरे करतार।।

टीका - मेरे मन के भीतर लोभ कुत्ता है, मिथ्या भाषण भंगी है और ठगकर खाना मृत पशु (को खाने के समान) है। (हे जगत के कर्ता!) परनिंदा मानो मेरे मुंह में निरा परकीय मल भरा है और क्रोध चाण्डाल (मानो) मेरे अन्दर प्रज्वलित अग्नि है। आत्म प्रशंसा कषाय रस है (जो मुझे स्वाद लगते हैं) हे मेरे कर्तार (इन रुचियों से प्रेरित ही) मेरे समस्त कर्म होते रहते हैं।' (गुरु नानक वाणी प्रकाश (भाग पहला, हिन्दी में); पृ० 80-81)

प्रथम उदासी के दौरान गुरु नानक देव जी जब हरिद्वार पहुँचे वहां जाति-आधारित छुआछूत का एक दृष्टान्त हुआ। गुरु नानक देव जी सत्य-कर्म करते हुए नाम जपने को तीर्थ-स्नान के समान मानते हैं। वे ही मनुष्य ईश्वर के घर में उत्तम गिने जाते हैं जो दुर्बुद्धि नहीं हैं और निर्दयता, परनिन्दा, क्रोध करने वाले नहीं।

निम्न जाति के लोगों की परछाई से बचने के लिए ऊँची जाति के यात्री अपने चौके-चूल्हे के इर्द-गिर्द लाईन खींच रहे थे, तो गुरु जी ने जो सबद कहा उसका सार यह है कि 'जूठ स्वयं के अन्दर होती है, बाहर से नहीं होती, लकीरें खींचने का कोई लाभ नहीं।'

कुबुधि डूमनी कुदइया कसाइणि
पर निंदा घट चूहड़ी मूठी क्रोध चंडालि।
कारी कढ़ी किआ थीऐ जां चारे बैठीआ नालि।
सचु संजमु करणी कारां नावणु ना जपेही।
नानक अगै ऊतम सेई जि पापां पंदि न देही।

अर्थात् (जीव के भीतर) दुर्बुद्धि डोमनी है, निर्दयता कसाइन है, मन के भीतर परनिन्दा का भाव भंगिन है और क्रोध जिसने जीव को कुमार्ग पर डाला हुआ है, चण्डालनी है। रसोई के चौके की रेखाएं खींचने का क्या लाभ है, यदि (उपर्युक्त) ये चारों उस जीव के भीतर सदा उसके साथ हैं? (जो जीव) सत्य को चैका पवित्र रखने की युक्ति बनाते हैं, सत्कर्म को चौके की रेखाएं और नाम जपने को तीर्थों का स्नान बनते हैं और जो किसी अन्य को पाप करने की शिक्षा नहीं देते (नानक) आगे ईश्वर के घर, वे ही उत्तम गिने जाते हैं। (गुरु नानक वाणी (भाग पहला); हिन्दी में; पृ० 208

गुरु नानक देव जी ऐसे मनुष्य को ईश्वर का स्वरूप मानकर, स्वयं को उसका दास कहते हैं, जो शूद्र की सेवा, क्षत्रिय की बहादुरी, ब्राह्मण के वेद-धर्म आदि सभी तरीकों को एक साथ मानता हो, करता हो। एक ही व्यक्ति में सभी वर्णों के गुण समाहित हों, तभी वह सम्पूर्ण है, पूजनीय है। इन्सानियत को बांटने वाली अप्राकृतिक वर्ण-जाति व्यवस्था के विपरीत मानवता को एकत्व प्रदान करने वाली, भेदभाव को समूल नष्ट करने वाली गुरु नानक देव जी की यह विचारधारा है।

यही नहीं गुरु नानक देव जी कहते हैं कि जब ईश्वर जाति, कुल, वर्ण से रहित है तो हम न उच्च जाति, न नीच जाति और न ही किसी मध्यम जाति के हैं। वास्तव में प्रभु की शरण में आने और उसका भक्त कहलाने वाला जाति, कुल और वर्ण से रहित हो जाता है। स्पष्ट है कि जो जाति, कुल, वर्ण का विचार (पहचान) रखता है, वह प्रभु का भक्त हो ही नहीं सकता। गुरु नानक देव जी का यह पद है -

'ऐ जी ना हम उत्तम नीच न महिम हरि सरणागति हरि के लोग।'

भावार्थ यह है कि - हे भाई! अब हम न उत्तम (जाति), न नीच (जाति) और न ही किसी मध्यम जाति के हैं क्योंकि प्रभु की शरण में आ गये हैं। (जो जाति, कुल और वर्ण से रहित है); अब हम भगवान के

भक्तों में परिगणित हो गए हैं। (गुरु नानक वाणी प्रकाश (भाग पहला); हिन्दी में; डॉ. तारन सिंह; पृ॰ 619-20)

एक अन्य पद में गुरु जी फरमाते हैं -
सभ को ऊचा आखीऐ, नीचु न दीसै कोइ।
इकनै भांडे साजिए, इकु चानण तिहु लोइ।

अर्थात् सभी मनुष्य अच्छे हैं (सभी को ऊँचा कहना चाहिए) नीच (अधम) कोई दिखाई ही नहीं देता (कारण यह है कि) एक प्रभु ने समस्त शरीर बनाए हैं और तीनों लोकों में (समस्त शरीरों में) एक ही ज्योति विद्यमान है।

एक अन्य पद है -
फकड़ जातीं फकडु नाउ।
सभना जीआ इका छाउ।
आपहु जे को भला कहाए
नानक तापरु जापै जा पति ले वै पाइ।।

अर्थात् 'जाति' का (अहंकार) व्यर्थ है। नाम (महान होने) का अहंकार व्यर्थ है। (क्योंकि) समस्त प्राणियों को एक प्रभु का आश्रय है। यदि कोई अपने आप को (जाति अथवा कीर्ति के कारण) अच्छा कहलाता है (तो वह अच्छा नहीं हो जाता है)। (नानक) कोई अच्छा तब दिखाई दे सकता है जब उसकी प्रतिष्ठा (हरि के) लेखे में स्वीकृत हो। (डॉ. तारन सिंह; गुरु नानक वाणी प्रकाश (भाग पहला); हिन्दी; पृ॰ 205-206)

'जाति' पर प्रहार करते हुए गुरु नानक देव जी एक अन्य जगह लिखते हैं:-

जाती दै किआ हथि सचु परखीऐ।।
महुरा होवै हथि मरीऐ चखीऐ।।

अर्थात् जाति-पांति के वश में कुछ नहीं। सच की परख होनी है। जो भी जहर खायेगा मरेगा। (भाई जोध सिंह (सं.); गुरु नानक वाणी; (पंजाबी में) नैश्नल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली; पांचवां संस्करण 1996; पृ० 45)

'जाति' के सवालों पर गुरु नानक देव जी के इन महान विचारों को जानना ही पर्याप्त नहीं है, उनके आदर्श जीवन को जानना भी जरूरी है। 'वर्ण-जाति' के सवाल पर गुरु जी के जीवन का पहला दृष्टान्त जनेऊ पहनने से इन्कार करने का है।

1496 ई० में गुरु नानक देव जी पहली उदासी के प्रारम्भ में अपने गांव से साठ मील दूर सैदपुर नामक नगर पहुंचते हैं। यहां पर वे भाई लालो (शूद्र) के घर ठहरे। उन्हें अपना पहला सिक्ख (शिष्य) बनाया।

चारों उदासियों के बाद गुरु जी 1521 में करतारपुर पहुँचते हैं और यहीं पर अन्तिम 18 वर्ष सिक्ख-पंथ की वैचारिकी और परम्पराओं को सुव्यवस्थित करते हैं। 'किरत करो-वंड छको (बांट कर खाओ) - नाम जपो' के सन्देश को अपने जीवन में व्यावहारिक रूप देकर दिखाया। 'संगत और पंगत' का सिद्धान्त दिया। 'लंगर' का फलसफा दिया। ये तीनों व्यवस्थाएं जाति-वर्ण के भेद को मिटाने वाली हैं। 'किरत करना' यानी श्रम को महत्त्व देने का अर्थ है श्रमिक वर्ग को अधिमान देना। बांट कर खाने का अर्थ है समाजवाद। 'नाम जपने' का अर्थ है - निर्गुण-निराकार ईश्वर की भक्ति अर्थात् मन्दिर-मस्जिद पर काबिज उच्च वर्ग की भेदकारी विचारधारा से मुक्त बराबरी का धर्म। 'संगत' का अर्थ है अच्छे लोगों की संगति में बैठकर सहचार, सह-अस्तित्व और भ्रातृत्व का भाव पैदा करना। 'पंगत' का अर्थ है पंक्ति में। सभी भेदभाव मिटाकर एक ही पंक्ति में बैठकर सामूहिक 'लंगर' छकना (तृप्त भाव से खाना)।

गुरु जी की वाणी व जीवन ने उदार मानवतावादी संस्कृति का, लोकतांत्रिक प्रगतिशील मूल्यों का, निर्भय, निरवैर दर्शन की सकारात्मक ऊर्जा का, सेवा, त्याग और बलिदान का, अपार धैर्य का, आशावादी,

मुक्त, स्वच्छंद, नैतिक, शोषण-मुक्त और सबसे बढ़ कर न्यायकारी व्यवस्था का खेत तैयार किया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी गुरु नानक जी के बारे में लिखते हैं - "विचारों में उनका मत कबीर आदि निर्गुणिया सन्तों के मत से मिलता-जुलता है, लेकिन न तो इन भजनों में कबीर का अक्खड़पन है और न खण्डन-मण्डन की प्रवृत्ति। नानक कबीर की भाँति समाज के निचले स्तर से नहीं आये थे, इसलिए उनकी उक्तियों मे भुक्तभोगी की तीव्रता नहीं है। अत्यन्त सहल उदार भाव ही उनकी उक्तियों का प्रधान आकर्षण है। जाति-पाँति, छुआछूत और बाह्याचारों के प्रति आक्रमण का भाव उनकी उक्तियों में भी है। किन्तु यह आक्रमण प्रधान रूप से बौद्धिक है। कबीर के समान अनुभूतिजन्य नहीं है। विनय और मृदुता में इनकी तुलना भक्तवर रैदास के साथ की जा सकती है। यह मानना पड़ेगा कि जैसी अद्भुत प्रेरणादायिनी शक्ति उनकी वाणियों ने दी है वैसी मध्ययुग के किसी अन्य सन्त की वाणियों ने नहीं दी है।" (सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; 1979; पृ0 24-25)

जाति और वर्ण के बारे में गुरु नानक देव जी के विचारों और उनके जीवन की प्रेरणादायक कहानियों से हिन्दी जगत का परिचय बहुत कम है। इसको हिन्दी जगत के विमर्शों का हिस्सा बनाना इसलिए भी जरूरी है कि यह (नानक जी की वाणी व जीवन) 'जाति' के अमानवीय, अवैज्ञानिक, अनैतिक, अन्यायी, शोषणकारी, विभेदकारी ढाँचे पर तत्कालीन संदर्भों में क्रान्तिकारी प्रहार करता है। गुरु नानक देव जी का भारतीय समाज में से 'जाति' को तोड़ने में ऐतिहासिक योगदान है।

अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, पूण्डरी, सम्बद्ध कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

अशोक भाटिया की कविताएं

स्त्री का सच

भरे-पूरे घर में
स्त्री के मुंह में
लगी है कटी ज़ुबान
पर दुनिया को दिखती है
लिपस्टिक की हंसी

शोर से भरे घर में
स्त्री के कान में
पड़ा है पिघला सीसा
दुनिया को दीखते हैं सुंदर टॉप्स

रंग-बिरंगे घर में
स्त्री की आंखों पर चढ़े हैं
पुरुष के बनाए चश्मे
जो सपनों में भी नहीं उतरते
पर दुनिया को दिखती है काजल
की चमक
सिर पर तेल
देह पर साड़ी लपेट
अपनी घुटन में
जीती है एक स्त्री
जिसे दुनिया सुंदर कहती है...

सबकी तरह

सबकी तरह उसे
हवा ने हवा दी
पानी ने पानी
धूप ने धूप दी
बाजार ने साग-सब्ज़ी

सबकी तरह उसे
किरयाने ने
आटा-दाल
रसोई ने रोटी दी
दुकान ने
कागज़ कलम दवात
स्कूल ने पढ़ाई दी

सबकी तरह उसे
डॉक्टर ने दवा दी
समय ने मृत्यु

सबकी तरह
श्मशान में उसे
लकड़ी ने जलाया
मिट्टी ने गले लगाया
फिर भी ताउम्र अछूत
कहलाया !

महेन्द्र सिंह की कविता

थोड़ा बच्चा रहने दो

दिल का सच्चा रहने दो
हमें थोड़ा बच्चा रहने दो

तुम ही हो सिखाते चतुराई
तुम ही हो बनाते हरजाई
ना रंग चढ़ाओ, हम पर कोई
हमें सीधा-सच्चा रहने दो

सिखाओ न हमको दगाबाजियाँ
बताओ न हमको कलाबाजियाँ
मन से होठों का रिश्ता मत तोड़ो
जो दिल में है वो कहने दो

क्या जानें हम सीमाएँ
राहों में न डालो बाधाएँ
कुदरत की दी फिजाओं में
जंगल में, नदी सा बहने दो

इधर न खेलो, उधर न जाओ
बाएँ न घूमो, बस दाएँ जाओ
छाता सिर पे लगाना छोड़ो
हमें सर्दी-गर्मी सहने दो

गोलेन्द्र पटेल की कविताएं

लकड़हारिन

(बचपन से बुढ़ापे तक बाँस)
तवा तटस्थ है चूल्हा उदास
पटरियों पर बिखर गया है भात
कूड़ादान में रोती है रोटी
भूख नोचती है आँत
पेट ताक रहा है गैर का पैर

खैर जनतंत्र के जंगल में
एक लड़की बिन रही है लकड़ी
जहाँ अक्सर भूखे होते हैं
हिंसक और खूँखार जानवर
यहाँ तक कि राष्ट्रीय पशु बाघ भी

हवा तेज चलती है
पत्तियाँ गिरती हैं नीचे
जिसमें छुपे होते हैं साँप बिच्छू गोजर
जरा सी खड़खड़ाहट से काँप जाती है रूह
हाथ से जब जब उठाती है वह लड़की लकड़ी
मैं डर जाता हूँ...!

मूर्तिकारिन

राजमंदिरों के महात्माओं
मौन मूर्तिकार की स्त्री हूँ

समय की छेनी-हथौड़ी से
स्वयं को गढ़ रही हूँ

चुप्पी तोड़ रही है चिंगारी!

सूरज को लगा है गरहन
लालटेनों के तेल खत्म हो गए हैं

चारो ओर अंधेरा है
कहर रहे हैं हर शहर

समुद्र की तूफानी हवा आ गई है गाँव
दीये बुझ रहे हैं तेजी से
मणि निगल रहे हैं साँप

और आम चीख चली -
दिल्ली!

मुसहरिन माँ

धूप में सूप से
धूल फटकारती मुसहरिन माँ को देखते
महसूस किया है भूख की भयानक पीड़ा
और सूँघा मूसकइल मिट्टी में गेहूँ की गंध
जिसमें जिंदगी का स्वाद है

चूहा बड़ी मशक्कत से चुराया है
(जिसे चुराने के चक्कर में अनेक चूहों को खाना पड़ा जहर)
अपने और अपनों के लिए
आह! न उसका गेह रहा न गेहूँ
अब उसके भूख का क्या होगा?
उस माँ का आँसू पूछ रहा है स्वात्मा से
यह मैंने क्या किया?

मैं कितना निष्ठुर हूँ
दूसरे के भूखे बच्चों का अन्न खा रही हूँ
और खिला रही हूँ अपने चारों बच्चियों को

सर पर सूर्य खड़ा है
सामने कंकाल पड़ा है
उन चूहों का
जो विष युक्त स्वाद चखे हैं
बिल के बाहर
अपने बच्चों से पहले
आज मेरी बारी है साहब!

घिरनी

फोन पर शहर की काकी ने कहा है
कल से कल में पानी नहीं आ रहा है उनके यहाँ

अम्माँ! आँखों का पानी सूख गया है
भरकुंडी में है कीचड़

खाली बाल्टी रो रही है
जगत पर असहाय पड़ी डोरी क्या करे?

आह! जनता की तरह मौन है घिरनी
और तुम हँस रही हो।

लेखक काशी हिंदू विश्वविद्यालय का छात्र (हिंदी आनर्स), मो.नं. : 8429249326

गुरदीप भोसले की कविता

आगन्तुक तुम भी
स्मरण रखो,
है खेल ये चक्र रूप,
बरपे कहर जब प्रकृति का
हो जाता ये रूप कुरूप।
वैमनस्य ये भरी कूट कर
मानव है ? या है औघड़,
सलिल हुआ ये विषमय जैसे
भर लाये कोई अमृत दोघड़।
प्रकृति से तुम हुए विमुख
भोग बना है प्रथम करत,
हुआ आघात जब देवी का तुमपर
उरवड़ी भ्रांति की सब परत।
है क्षण अभी, कर लो तुम होश
है करत तुम्ही का..ना ईश का दोष
पकड़ डोर, कर लो तुम ध्यान
ना आये कभी जीवन मे रोष।

आगंतुक तुम भी स्मरण रखो...

संपर्क - लेखक कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में स्नातकोतर
हिंदी के छात्र हैं। 8607052616

आलेख

अंतर-जातीय विवाह से मिटेगा जातिवाद

□ स्वामी अग्निवेश

हमें अंतरजातीय विवाह करने वाले जोड़ों के पक्ष में अभियान चलाना होगा, क्योंकि प्रेमी जोड़े किसी दबाव में आकर शादी नहीं करते हैं बल्कि अपने मन के मुताबिक फैसला करते हैं। ऐसे में तार्किक और प्रगतिशील समाज बनाने का सपना देखने वालों को भी आगे आना होगा। सरकारों को ऐसी शादी करने वाले नौजवानों की पूर्ण सुरक्षा करनी चाहिए। सुरक्षा प्रदान करने के साथ ही उनको सरकारी नौकरियों में प्राथमिकता दी जाए और ऐसे विवाह से उत्पन्न संतानों को अच्छे स्कूलों में एडमिशन मिले।

इस समय बरेली के एक युवा जोड़े के अंतरजातीय प्रेम विवाह की चर्चा जोरों पर है। मीडिया से लेकर सत्ता के गलियारों में इस प्रेम विवाह की धमक सुनी जा रही है। इलाहाबाद हाई कोर्ट ने प्रेमी युगल को सुरक्षा देने का आदेश देते हुए दोनों की शादी में किसी भी प्रकार की आपत्ति को खारिज कर दिया है। लेकिन लड़की के परिजनों के पक्ष में सोशल मीडिया पर एक तरह से अभियान चलाया जा रहा है। लड़के-लड़की पर तरह-तरह के आरोप लगाए जा रहे हैं। लड़का-लड़की दोनों बालिग हैं, और दोनों पढ़े-लिखे हैं। कानूनी रूप से दोनों शादी करने के लिए स्वतंत्र हैं। लेकिन अपनी जान बचाने के लिए हाई कोर्ट और पुलिस प्रशासन से

सुरक्षा करने की गुहार लगानी पड़ रही है। ऐसे में सवाल उठता है कि आखिर दोनों की शादी के विरोध के पीछे का कारण क्या है?

उक्त मामले में प्रेमी युगल कानूनी रूप से तो शादी करने के योग्य हैं, लेकिन हमारा समाज आज भी अंतरजातीय प्रेम विवाहों को मान्यता नहीं देता है। यहां तो और ही मामला जटिल है। लड़की उच्च जाति और लड़का अनुसूचित जाति का है। लड़की का पिता राजनीतिक-आर्थिक रसूख वाला है। दूसरी तरफ समाज के ठेकेदारों को भी यह मान्य नहीं है कि उच्च जाति की लड़की किसी अनुसूचित जाति के लड़के से शादी करके आराम से अपना जीवन -यापन करे।

भेद-भाव का यह तो एक पहलू है। अत्याचार के मूल में ही जन्मना जातिवाद है। सामाजिक रूप से भले ही जन्मना जातिवाद को महत्व मिलता हो, लेकिन धार्मिक और कानूनी रूप से जन्मना जातीय श्रेष्ठता का कोई औचित्य नहीं है। जन्म के आधार पर जातीय श्रेष्ठता सृष्टि के नियमों के खिलाफ है। यह मानवतावादी मान्यताओं का भी विरोध करता है। हिंदू धर्म के मूल ग्रंथ वेद और उपनिषद हैं। वेद और उपनिषद में जन्म के आधार पर जाति श्रेष्ठता का कहीं जिक्र नहीं है। यहां तक कि स्कंद पुराण में तो स्पष्ट रूप से लिखा गया है कि- जन्मना जायते शूद्र संस्कारात द्विज उच्यते। अर्थात हर इंसान शूद्र पैदा होता है और संस्कारों से ही उसका दूसरा जन्म होता है। तो जन्म के आधार पर किसी को ऊंच-नीच अपराध है।

जन्म से ही नीच व अछूत घोषित करने का पूरा का पूरा खेल उन चालाक धूर्त जातिवादी तत्वों का है, जो ईश्वर के नाम पर लाभ उठा रहे हैं। जातिवादी-कट्टरपंथी तत्वों ने नियमों के विरुद्ध जाकर जातिवादी व्यवस्था को बनाया-बचाया है। दरअसल, जन्म के आधार पर श्रेष्ठता का कोई तार्किक-वैज्ञानिक कारण नहीं है।

जन्म से ही नीच व अछूत घोषित करने का पूरा का पूरा खेल उन चालाक धूर्त जातिवादी तत्वों का है, जो ईश्वर के नाम पर लाभ उठा रहे हैं। जातिवादी-कट्टरपंथी तत्वों ने नियमों के विरुद्ध जाकर जातिवादी व्यवस्था को बनाया-बचाया है। दरअसल, जन्म के आधार पर श्रेष्ठता का कोई तार्किक-वैज्ञानिक कारण नहीं है।

कोई धर्म ऐसा कैसे हो सकता है कि जिसमें इंसान को इंसान नहीं माना जाता, बल्कि जन्म से ही उसे नीच और अछूत बता दिया जाता है। ऐसे धर्म की रूढ़ियों को हमें पूरी तरह से इनकार करना चाहिए और ऐसे धर्माचार्यों और जातिवादी ताकतों का विरोध करना चाहिए।

जन्मना जातिवाद का हमारे समाज में समय-समय पर विरोध होता रहा है। इतिहास में कई अवसरों पर इसके खिलाफ तीखा संघर्ष चला है। स्वतंत्रता संग्राम के समय बाबा साहब भीमराव आंबेडकर ने जातिवाद के संपूर्ण उन्मूलन की आवाज उठाई थी। उसके पहले ज्योतिबा फुले जैसे मनीषियों ने जातिवाद के खिलाफ बिगुल बजाया था। महर्षि दयानंद ने जन्म के आधार पर श्रेष्ठता को गलत बताते हुए युवा-युवतियों के गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर स्वयंवर प्रथा को पुनर्जीवित करने के लिए प्रबल आग्रह किया है। महात्मा गांधी ने तो संकल्प लिया था कि वह किसी ऐसी शादी में नहीं जाएंगे, जो अंतरजातीय विवाह न हो और नारायण भाई देसाई जो उनकी गोद में खेले थे, उनकी शादी में इसीलिए नहीं गए, क्योंकि वह अंतरजातीय नहीं थी।

हमें अंतरजातीय विवाह करने वाले जोड़ों के पक्ष में अभियान चलाना होगा, क्योंकि प्रेमी जोड़े किसी दबाव में आकर शादी नहीं करते हैं बल्कि अपने मन के मुताबिक फैसला करते हैं। ऐसे में तार्किक और प्रगतिशील समाज बनाने का सपना देखने वालों को भी आगे आना होगा। सरकारों को ऐसी शादी करने वाले नौजवानों की पूर्ण सुरक्षा करनी चाहिए। सुरक्षा प्रदान करने के साथ ही उनको सरकारी नौकरियों में

प्राथमिकता दी जाए और ऐसे विवाह से उत्पन्न संतानों को अच्छे स्कूलों में एडमिशन मिले। अभी तक जहां-जहां मान अभिमान का प्रश्न बना कर 'ऑनर किलिंग' के नाम पर ऐसी हत्याएं हुई हैं, उनकी सुनवाई फास्ट ट्रैक कोर्ट में जल्द से जल्द करके कड़ी से कड़ी सजा का प्रावधान निश्चित किया जाए।

आज की आर्य समाज को इसका प्रायश्चित करते हिंदू मैरिज एक्ट के तहत विशेष सुविधा 1937 के कानून में मिली है, उसका भरपूर उपयोग करते हुए अंतरजातीय, अंतर धार्मिक शादियों को अंजाम देना चाहिए। अंतरजातीय और दहेजरहित शादियों से एक विशाल बिरादरी बनेगी और वसुधैव कुटुंबकम का सपना साकार होगा। और मनुष्य मनुष्य के बीच में जन्मना जातिवाद का जहरीला कीड़ा पूरी तरीके से समाप्त किया जाएगा।

आर्य जगत की बहुत बड़ी विभूति श्री संतराम बीए ने इस काम में अपना जीवन समर्पित किया था और लाहौर में जात-पात तोड़क मंडल का गठन किया था। उसके एक बड़े अधिवेशन में जब बाबा साहब भीमराव आंबेडकर को अध्यक्षता के लिए बुलाया गया, तो कतिपय कठमुल्ला के विरोध की वजह से वह अधिवेशन रद्द करना पड़ा था।

आज की आर्य समाज को इसका प्रायश्चित करते हिंदू मैरिज एक्ट के तहत विशेष सुविधा 1937 के कानून में मिली है, उसका भरपूर उपयोग करते हुए अंतरजातीय, अंतर धार्मिक शादियों को अंजाम देना चाहिए। अंतरजातीय और दहेजरहित शादियों से एक विशाल बिरादरी बनेगी और वसुधैव कुटुंबकम का सपना साकार होगा। और मनुष्य मनुष्य के बीच में जन्मना जातिवाद का जहरीला कीड़ा पूरी तरीके से समाप्त किया जाएगा।

साभार – अमर उजाला

ढाकफाही मास्टर

□ कृष्ण चन्द्र महादेविया

आप में बहुत सारे गुण हों या पूरे के पूरे बावन गुण हों। परन्तु जी, आजकल अगर ढाकफाही नहीं आती तो पिछोड़े के पिछोड़े रह जाते हैं। फिर पिछोड़ों को गिनता भी कौन। आगे रहने वाले और आगे के मौज ले लेते हैं। पिछोड़े देखते रह जाते हैं। पिछोड़े मनुष्य कितना भी लायक हो उसे नालायक ही गिनते हैं। सर्दी के दिनों में जैसे जले अलाव के पास आगे-आगे वाले गर्म-गर्म रहते हैं और पीछे वाले ठण्डे ही रहते हैं। बस वैसे ही लायक आदमी भीतर ही भीतर सिसकते रहते हैं। सयाने सच ही कह गए हैं कि गर्म सईं-सईं करता है और ठण्डा चुप-चुप रोता है।

तो जी ढ़ाकफाही में ढाक और फाही दो विशेष शब्द हैं। सब जानते हैं कि ये ढाक कुश्ती करने वालों का एक बढ़िया दाव है। पहलवान अपने सामने वाले को ढाक लगाकर गिरा देता है। चलते-चलते किसी पुरूष या महिला को कोई ढाक लगाए तो वह धड़ाम से नाक के बल गिर जाते हैं। मुंखड़े पर धूल और नाक चपटी हो जाती है। अब फाही यानी फांसी किसी को लगाते हैं तो वह भी पूरा गिर जाता है और उसके बचने की भी ना उम्मीदी ही होती है। रस्सी गले से फंस गई तो गर्दन टूट जाती है और फिर धर्मराज के दूत ले जाएंगे अगर धर्मी हुए तो । अब मास्टर शब्द को सभी जानते हैं। अब पढ़ाने वाले तो मास्टर होते ही हैं, नाईं को भी मास्टर कहते हैं। सयाने कह गए हैं सयाने कह गए हैं नाई और कोवा बहुत चालाक होते हैं। जो व्यक्ति ढाक लगाने और फांसी

लगाने का मास्टर हो उसे ढाकफाही मास्टर कहते हैं। ढाकफाही वाला भी पुकारते हैं। ढाकफाहिया मतलब गीदड़ और नाई से भी चालाक। यानी साम-दाम -दण्ड -भेद यानी सब मंत्र जानने वाला चुतर मनुष्य। आज तो ढाकफाही वाले के पास ही सब कुछ है। चारों ओर ढाकफाही मास्टरों की पौ बारह ही है। वे जो भी चाहते हैं वह झटपट हो जाता है। भैया जिसके हाथ में डोई उसका सब कोई। औरों की तो नारसिंह महाराज ही इज्जत रखे।

आज चारों ओर ढाकफाही मास्टरों की बल्ले-बल्ले है। सीधे और भोलों की थल्ले-थल्ले है। अब चाहे ठेका हो या थाना, भांवला हो या भावना बस जी ढाकफाही ही ढाकफाही नजर आते हैं। अच्छे-भले, रोने वाले-हंसोड़, छोटे-मोटे , सरल-चालाक, बकवादी और दुष्ट सभी ढाकफाही वालों के मित्र- सज्जन हैं। जहां भी देखों वहां ढाकफाही की ही पूछ है। यहां अगुए भी ढाकफाही, बिचैले भी ढाकफाहीए, रखना-खाना, ढकना- सामने रखना, इधर-उधर करने वाले भी ढाकफाही है। फिर ये सीधे-सादे किस खेत की मूली हैं। वह सयानों का कहा यहां फेल हो गया कि चालाक की पन्द्रह और भोले की सोलह। चालु- चालाक ही ढाकफाही वाला है। सज्जन और साधु बस देखने वाले ही हैं। सयानों ने यह सही कहा कि - चोर और उच्चके चैधरी हैं, भीतरघाती महिला प्रधान हैं। भले मानुष घर के भीतर हैं, नंगे लड़ते रहे मैदान हैं।

एक विभाग के ढाकफाही मास्टरों की तो बात ही न्यारी है। वे एक गांव में नौकरी लगते हैं तो पड़ोस के गांव से सेवानिवृत होकर ही घर में घुसते हैं। इनकी बड़ो-बड़ों से मिलनी होती है। गरीब-सरीब , भोले-सिधों को तो ढोली-डफाली ही गिनते हैं। कुछ ऐसा ही किस्सा आपके सामने रखना है। तो जी आप ही निर्णय करेंगे कि ढाकफाही मास्टर ही आजकल के महाराज हैं। किसान और तरखान, राक्षस और मशान पालतु हो गए हैं।

महाराजा हुआ येसा कि सारे राज्य के बड़े विद्वान, लेखक, कवि, नाटकाकर-कलाकार, सरकार का आला अफसर, उनका पीए, राज्य और जिला के बड़े अधिकारी बड़े साहित्य के समारोह में आए थे। समारोह से पूरा सभागार भरा हुआ था। होना यह था कि बड़े अफसरों और लेखकों में से लेखकों को बड़ा पुरस्कार दिया जाना था। लेखकों में एक से बड़ा एक लेखक था। भले मनुष्य, सीधे, सच्चे लेखकों को विश्वास था कि अपनी रचनाओं में से बढ़िया पुस्तक को ही प्रथम पुरस्कार मिलना है। नाटककार, कलाकार सबको स्वयं पर पूरा दृढ़ विश्वास था। भाई ये लेखक बहुत बढ़िया थे पर यहां भी ढाकफाही मास्टर सक्रीय हो गए।

पुरस्कार वह भी बहुत । नगद इनाम भी लाखों का, नाम की चमक-धमक तो सूर्य की तरह अलग से पुरस्कार किसे नहीं बढ़िया लगते? ढाकफाही तो सक्रीय होने ही थे। लग गए अपने काम में। ढाकफाही मास्टरों में सबसे तेज था गरीबदास मुन्शी। आंख का अंधा नाम नयन सुख। नाम गरीबदास पर पूरा कुबेर। थाने के मुन्शी से भी तेज-तर्रार ढाकफाही मास्टर गरीबदास मुन्शी जी ने तेज दिमाग लगाया। उसने चार चादरें, चार टोपियां, चार मुमैंटो, चार गुलदस्ते मंगा लिए। बड़े नेता का एक खासम-खास और रिश्तेदार साथ में मिला लिया। देश की राजधानी, अपने राज्य की राजधानी के दो जिले का एक कुल चार अफसर लपेटे में ले लिए। अपने नजदीकी रिश्तेदार पर ढक्कन जैसे के हाथ चारों अफसरों का सम्मानित करा दिया। महाराज जी, ढाकफाही मास्टर ने सबका दिल जीत लिया। लेखक, नाटकार, कलाकर, सिधे-भोले , चतुर-चालाक सब जन गरीबदास मुन्शी के सम्मान करने के ढंग की बहुत प्रशंसा करते रहे। उस वक्त किसी को भी मुन्शी जी की ढाकफाही का पता ही नहीं चला। समारोह अति सुन्दर हुआ। बस सब जन मुन्शी के कायल हो चुके थे। सब अपने -अपने घर चले गए। यह उम्मीद अवश्य रखी थी कि उनका नम्बर पुरस्कार के लिए लग सकता है।

भला दायी से पेट छुपा सकते है? गरीबदास मुन्शी जी की ढाकफाही छुप नहीं सकती थी। आखिकार हुआ वही कि जब पुरस्कारों की घोषणा हुई तो गरीबदास मुन्शी के साथ उनका एक चमचा नम्बर लगा गए थे। हर ओर गरीबदास मुन्शी जी का नाम और उनकी कविताओं के चर्चे थे। नेता जी का खासम खास कवि अब युवा कवि हो गए थे। रातों-रात ही वे प्रसिद्ध हो गए थे। हालांकि हमने आज तक उनकी कविताएं देश की किसी पत्रिका, पाक्षिक या समाचार पत्रों के साहित्यिक कॉलमों में नहीं पढ़ी हैं और तो और सोशल मीडिया में भी कभी नहीं पढ़ी है। यह पुरस्कार मिलने का चमत्कार मात्र ढाकफाही का ही था। ढाकफाही, जिन्दावाद, जिंदावाद। परिश्रमी व्यक्ति हमेशा ही कमजोर रहते हैं जबकि ढाकफाही तो मजे ही मजे लेते हैं।

भले ही ढाकफाही मास्टर अपनी चालबाजी से पुरस्कार ले ही ले किन्तु ढोलों की पोल तो खुल ही जाती है। धान तो फसल पराल के लगने से ही दीख जाते हैं। एक दिन तो सच सामने आ ही जाता है। सच यह भी है कि ढाकफाहियां को गले लगाए रखना कतई ठीक नहीं। सयाने कह गए हैं कि -

कंजरी काते चरखा, राजा करे व्यापार।

उस देश की भैया, होए ना भलकी बार।

ढाकफाहियों से सदा रखिए दूरी, इनकी दोस्ती सदा ही बुरी। शेष तो जै हो देवू नारसिंह जी की।

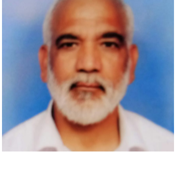

कृष्ण चन्द्र महादेविया, डाकघर - महादेव, सुन्दरनगर,
जिला मण्डी (हि. प्र.), मो. 8679156455

हिन्दी जाति का संगीत और सिनेमा

□ डॉ. अमरनाथ

गुलशन बावरा, कैफी आजमी, अली सरदार जाफरी, मजरूह सुल्तानपुरी, कमाल अमरोही, शकील बदायूंनी, साहिर लुधियानवी, गुलजार, जावेद अख्तर और निदा फाजली तक अधिंकांश बड़े गीतकार उर्दू के हैं किन्तु न तो उनके गीतों को 'उर्दू गीत' कहा जाता है और न तो उनकी फिल्मों को हम 'उर्दू फिल्में' कहते हैं - सं.

सिनेमा और संगीत का संबंध आम जनता से होता है. अमीर और गरीब सभी इसका आनंद समान रूप से ले सकते हैं. प्रकृति ने आंख, कान और जिह्वा सबको समान रूप से प्रदान दिया है. अमीरों की आंख में ज्यादा ज्योति हो, उनकी कानों में आवाज अधिक सुनाई देती हो या उनकी जिह्वा ज्यादा स्पष्टता से बोलने में मदद करती हो- ऐसा नहीं है. मनुष्य सिनेमा आंखों से देखता है, कानों से सुनता है और संगीत गुनगुनाने में जिह्वा मदद करती है. मनुष्य, प्रकृति की इस देन को अभी तक अमीरों और गरीबों के बीच स्तर भेद के अनुसार बांट पाने में सक्षम नहीं हो सका है. सिनेमा और संगीत का व्यापार करने वालों के सामने भी आम जनता रहती है क्योंकि इसका संबंध आम जनता के मनोरंजन से होता है. इसीलिए सिनेमा और संगीत का स्तर भेद के अनुसार बंटवारा अभी तक ज्यादा नहीं हो पाया है. इतना ही नहीं, हमारे राजनेताओं की तमाम साजिशों और कोशिशों के बावजूद हिन्दी सिनेमा और संगीत को

अभी तक मजहब के अनुसार बांटा नहीं जा सका है. हम कहते तो हैं 'हिन्दी सिनेमा', किन्तु उसकी आधी से अधिक पांडुलिपियां उर्दू लिपि में रहती हैं. हिन्दी फिल्मों में गाए जाने वाले गीतों में से लगभग तीन चौथाई गीत मुसलमान और तथाकथित उर्दू कवियों द्वारा रचे गए होते हैं. गुलशन बावरा, कैफी आजमी, अली सरदार जाफरी, मजरूह सुल्तानपुरी, कमाल अमरोही, शकील बदायूंनी, साहिर लुधियानवी, गुलजार, जावेद अख्तर और निदा फाजली तक अधिंकांश बड़े गीतकार उर्दू के हैं किन्तु न तो उनके गीतों को 'उर्दू गीत' कहा जाता है और न तो उनकी फिल्मों को हम 'उर्दू फिल्में' कहते हैं .

फिल्म निर्माण के प्रांरभिक चरण में मुंबई (बम्बई), कलकत्ता तथा मद्रास के अलावा लाहौर भी एक फिल्म निर्माण के केन्द्र के रूप में विकसित हुआ था. लाहौर एक प्रकार से हिन्दी क्षेत्र में पड़ता है. लाहौर का बंटवारे में पाकिस्तान का हिस्सा बन जाने के बाद कहीं भी हिन्दी क्षेत्र में कोई भी फिल्म निर्माण का केन्द्र नही विकसित हो सका. जहां बांग्ला, तमिल, तेलुगु में कला सिनेमा की एक मजबूत धारा बन चुकी है वहां हिन्दी में ऐसा नहीं हो सका. इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि हिन्दी सिनेमा में हिन्दी क्षेत्र से गंभीर कलाकार या निर्माता निर्देशक बहुत ही कम जुड़ पाए. इसकी परिणति इस रूप में हुई कि न सिर्फ व्यावसायिक बल्कि कला फिल्में बनाने वाले भी हिन्दी में फिल्में बनाने के लिए क्लासिक्स और लोक संस्कृति का अध्ययन करना जरूरी नहीं समझते. हिन्दी में एक अनुवादक के सहारे ही वे अपना कार्य सम्पन्न कर लेते हैं. हिन्दी सिनेमा के एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर जावेद अख्तर की स्वीकारोक्ति है कि वे कभी गाँव में नहीं रहे, कभी हिन्दी नहीं पढ़ी और हिन्दी लिख भी नहीं सकते (आई हैव नेवर लीव्ड इन ए विलेज एण्ड इन फैक्ट आई हैव नेवर स्टडीड हिन्दी. आई कैन नाट राइट इट.). इन्दुमिरानी, जावेद ए साफ्ट टच, द पायनियर दैनिक में प्रकाशित लेख, दिनांक 13 दिसंबर, 1997. पृष्ठ-16)

अनुपम ओझा लिखते हैं, " मैने कई कला फिल्मों की पटकथाएं देखीं. वे भी कामर्शियल फिल्मों की तरह ही रोमन में लिखी गई थीं. हिन्दी दोनों के लिए मुख्यत: बाजार की भाषा है. मुश्किल यह है कि उत्तर भारत में आज तक रंगमंच या सिनेमा के लिए सहायक माहौल नहीं बन सका." (भारतीय सिने सिद्धांत, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2002, पृष्ठ.- 83) हिन्दी भाषी क्षेत्रों में यदि आप सिनेमा को गंभीरता से लेते हैं और उसे अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाना चाहते हैं तो आप को कोई माहौल नहीं मिलेगा. प्रकाश झा जैसे एकाध अपवाद जरूर हैं. अभी तक हिन्दी सिनेमा के नाम पर जो फिल्में बनी हैं उनमें हिन्दी का परिवेश बहुत कम हैं. श्याम बेनेगल की फिल्मों में चित्रित परिवेश आमतौर से गुजरात, महाराष्ट्र या आन्ध्र प्रदेश का है. मृणाल सेन की फिल्मों में भी अधिकांशत: बंगाल का परिवेश मिलेगा. इन फिल्मकारों ने बड़ा दर्शक वर्ग प्राप्त करने के लिए ही हिन्दी का सहारा लिया है, इन्होंने परिवेश हिन्दी का नहीं लिया. ये हिन्दी क्षेत्र के यथार्थ से परिचित नहीं हैं. यही कारण है कि इनके द्वारा निर्मित हिन्दी फिल्में सही अर्थों में हिन्दी क्षेत्र की नुमाइन्दगी नहीं करती.

जिसे हम हिन्दी सिनेमा कहते हैं, भाषा की दृष्टि से उसने जो परंपरा अपनायी उसकी नींव पारसी थियेटर ने रखी थी और जिसके बारे में पारसी रंगमंच के नाटककार और आरंभिक फिल्मों के पटकथा लेखक नारायण प्रसाद 'बेताब' ने कहा था,

दरअसल बेताब जी ने जिस मिली जुली भाषा का जिक्र किया है वही हिन्दी भाषी क्षेत्र की आम जनता की जबान थी जिसे सबसे पहले रगमंच की हस्तियों ने पहचाना. यही कारण है कि हिन्दी सिनेमा की पटकथा लिखने के लिए हिन्दी और उर्दू दोनो शैलियों के लेखकों का सहयोग मिलता रहा है. यह अकारण नहीं है कि मशहूर फिल्म 'मुगले आजम' के निर्माता निर्देशक ने सेंसर बोर्ड से अपनी फिल्म के लिए हिन्दी

नाम का सर्टिफिकेट हासिल करना उचित समझा. उल्लेखनीय है कि अमीर खुशरो से लेकर मीर और गालिब तक सबने अपनी भाषा को हिन्दी ही कहा है. हिन्दी उर्दू का भेद बीसवीं सदी के दूसरे तीसरे दशकों में, पढ़े लिखे हिन्दुस्तानियों ने सचेत रूप से पैदा किया और अंग्रेजों की भी इसमें खास भूमिका थी. जैसा कि मैने पहले भी कहा है, आम जनता इस भेद को आज भी नहीं मानती. 'एनसाइक्लोपीडिया आफ इंडियन सिनेमा' के अनुसार में 1994 तक सिर्फ 5 फिल्में उर्दू की कोटि में आ सकीं थीं. (एनसाइक्लोपीडिया आफ इंडियन सिनेमा, बी.एफ.आई, लंदन 1994)

डॉ. कुंवरपाल सिंह ने राही मासूम रजा द्वारा प्रख्यात धारावाहिक महाभारत की पटकथा लिखने की घटना का रोचक तथ्य प्रस्तुत किया है. उन्होंने लिखा है, "राही से बी.आर.चोपड़ा ने महाभारत लिखने का प्रस्ताव किया तो उन्होंने व्यस्तता के कारण इसे स्वीकार नही किया. लेकिन गजब के पारखी हैं बी.आर. चोपड़ा भी. उन्होंने पटकथा और संवाद के लिए राही का नाम प्रेस कांफ्रेंस में ले लिया और यह बात समाचार पत्रों में छप गई. भारतीय संस्कृति के तथाकथित रक्षकों ने बी.आर.चोपड़ा को विरोध पत्र लिखे जिनका मूल स्वर था कि सारे हिन्दू मर गए हैं जो एक मुसलमान से महाभारत लिखवा रहे हैं? चोपड़ा ने ये पत्र राही साहब के पास भेज दिए. राही की यह एक कमजोर नस थी. वे भारतीय सभ्यता और संस्कृति के बहुत बड़े अध्येता थे और अपनी जड़ें भी पहचानते थे. भारतीय सभ्यता और संस्कृति के शोध कार्य में उन्होंने जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा लगाया था और उर्दू में इस विषय पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक भी लिखी है. अगले दिन उन्होंने चोपड़ा साहब को फोन किया – 'चोपड़ा साहब, महाभारत अब मैं लिखूंगा. मैं गंगा का बेटा हूं. मुझसे ज्यादा हिन्दुस्तान की सभ्यता और संस्कृति को कौन जानता है.' इस तरह राही महाभारत लेखन के मिशन में जुड़ गए."(सिनेमा और संस्कृति, राही मासूम रजा, संपादक, कुंवरपाल सिंह, भूमिका भाग)

सिनेमा के अध्येता प्रह्लाद अग्रवाल के शब्दों में, " सिनेमा नजर से नजर का खेल है. यह जिसे हम हिन्दी सिनेमा कहते हैं, वस्तुत: हिन्दुस्तानी सिनेमा है जो समूचे हिन्दुस्तान में और जहाँ जहाँ भी हिन्दुस्तानी मूल के लोग निवास करते हैं, उनको भावनात्मक रूप से एक सूत्र में जोड़ने का काम करता है. हिन्दी भाषा जितनी सुगमता से फिल्मों के गानों के माध्यम से विभिन्न भाषा -भाषियों के बीच पहचानी गई, उतनी अन्य किसी माध्यम से नहीं. इसकी निर्मिति में भी हिन्दी- भाषी लोगों की जगह पंजाबी, मुस्लिम, बंगाली, गुजराती, मराठी और यहाँ तक कि दक्षिण भारतीय भाषा -भाषी लोगों का कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण योगदान है. इसी तरह इसकी भाषा और सांस्कृतिक संरचना भी पंचमेल है. इसमें हिन्दुस्तान भर में बोले जाने वाले शब्द और तमाम जातीय-प्रजातीय शब्द और आचार व्यवहारों का समन्वय भी देखने को मिलता है. यह नि:सकोच कहा जा सकता है कि हिन्दी सिनेमा ने भारतीय संस्कृति के मूलमंत्र अनेकता में एकता को सही अर्थों में प्रस्तुत किया है." (हिन्दी सिनेमा : बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक. (सं.) प्रह्लाद अग्रवाल, संपादकीय, पृष्ठ—23)

हिन्दी फिल्मों का इतिहास लगभग एक सौ वर्ष पुराना है. सन् 1895 में फ्रांस की राजधानी पेरिस में सिनेमा का जन्म हुआ. 28 दिसंबर 1895 को पेरिस के एक रेस्तरां 'ग्रैंड कैफे' में सर्व प्रथम फिल्म प्रदर्शित हुई. दुनिया की इस पहली फिल्म को देखने के लिए सिर्फ 30 व्यक्ति ही आए. दृश्यों का आपस में कोई ताल मेल न था. कहानी, गीत -संगीत, संवाद आदि कुछ भी नहीं था. इस फिल्म में एक शरारती बालक द्वारा पाइप का मुंह दबाकर पाइप द्वारा बाग में माली पर फव्वारा छोड़ना, प्लेटफार्म की भीड़ में ट्रेन का आगमन आदि के दृष्य थे. इस फिल्म को बनाने बाले दो व्यक्ति आगस्ट और लुई लुमियर सगे भाई थे जो फोटोग्राफी का सामान बेचते थे. 1901 में कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से गणित की परीक्षा में सर्वाधिक अंक पानेवाले भारतीय छात्र आर. पी. परांजपे

भारत लौटे तो उनके स्वदेश आगमन के दृश्य को फिल्माया गया जिसे भारत की पहली डाक्युमेंट्री फिल्म माना जाता है. 1902 में कलकत्ता के क्लासिकल थियेटर में के. शशि ने ग्रामोफोन डिस्क पर गीत रिकार्ड कराया. 1905 में जे.एफ. मदन ने फिल्म निर्देशन का काम शुरू किया. उन्होंने 1907 में कलकत्ता में देश का पहला सिनेमा हाल 'एलफिंस्टन पिक्चर पैलेस' बनवाया और 1913 में अपने देश की पहली भारतीय फिल्म का निर्माण प्रारंभ हुआ जिसके जनक थे मराठी भाषी घुंडीराव गोविंद फाल्के (दादा साहब फाल्के) और फिल्म थी 'राजा हरिश्चंद्र'. यह एक गूंगी फिल्म थी जिसका प्रदर्शन 3 मई 1913 को बंबई के 'कोरेनेशन थियेटर' में हुआ. विदेश (लंदन) मे सन् 1914 में प्रदर्शित होने वाली प्रथम भारतीय फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' ही थी.

उक्त फिल्म में दादा साहब फाल्के ने सब टाईटल्स अंग्रेजी के साथ -साथ हिन्दी में रखे थे तथा जब उन्होंने पहली बार फिल्म में आवाज भी शामिल किया तो हिन्दी का ही प्रयोग किया. इतना ही नहीं, मूक फिल्मों में पर्दे के पीछे बैठ कर संगीत देने की शुरुआत एक गुजराती भाषी द्वारकादास संपत ने की थी. इतना ही नहीं, फिल्मों की अपार व्यावसायिक संभावनाओं को देखते हुए हिन्दी के विशाल दर्शक समुदाय तक पहुंचने के लिए पहली सवाक फिल्म 'आलम आरा' के लिए भी हिन्दी- उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया गया. यही हिन्दुस्तान की आम बोलचाल की भाषा है जिसे प्रारंभ से ही फिल्मकारों ने पहचान लिया था. इसी संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि 1931 में बनी कुल 27 फिल्मों में से 22 फिल्में हिन्दी में बनी थी जबकि फिल्म निर्माण के तत्कालीन केन्द्र तब भी अहिन्दी भाषी क्षेत्र में थे तथा इससे जुड़े अधिकांश व्यक्ति भी गैर हिन्दी भाषी ही थे. व्ही. शांताराम, पी.सी.बरुआ, बिमल राय, सत्यजित रे, श्याम बेनेगल, भूपेन हजारिका जैसे सिनेमा जगत की अधिकांश दिग्गज अहिन्दी क्षेत्र के थे.

हिन्दी सिनेमा और संगीत का रिश्ता 'आलम आरा' से जुड़ा. 'आलम आरा' 14 मार्च 1931 को बंबई के 'मैजेस्टिक' सिनेमा में प्रदर्शित हुई थी. यह संगीत प्रधान फिल्म थी. इसे अर्देशिर ईरानी नामक एक पारसी ने बनाया था. हिन्दी सिनेमा के प्रथम संगीतकार फिरोज शाह मिस्त्री और ईरानी माने जाते हैं. पहला गायक डब्ल्यु. एम. खाँ थे. उन्होंने 'आलम आरा' में गीत गाया था. 'आलम आरा' के गीतों से ही फिल्मकारों को समझ में आ गया कि संगीत, दर्शको को आमंत्रित करता है. इसके बाद बनी 'इंद्र सभा' में 71 गाने थे. वह पूरी फिल्म पद्य में थी. 'आलम आरा' की नायिका जुबैदा से भारतीय फिल्मों में नायिका –अभिनेत्री का दौर शुरू हुआ. संवादों के साथ-साथ पार्श्व संगीत देने की शुरुआत 'अमृत मंथन' (1934) से हुई. प्रभात फिल्म्स के बैनर तले निर्मित इस फिल्म के निर्देशक शांताराम और संगीत निर्देशक के. भोंसले थे.

हिन्दी सिनेमा को लेकर प्रेमचंद की उक्त अवधारणा उनके अपने अनुभवों का परिणाम थी. मेरा अपना अनुभव है कि बांग्ला फिल्मों के बारे में प्रेमचंद ठीक यहीं बातें नहीं कह सकते थे. बंगला के प्रभाव से ही सही, हिन्दी क्षेत्र में भी नवजागरण हुआ था जिसके अग्रदूत भारतेन्दु थे. इतना ही नहीं, हिन्दी क्षेत्र में भक्ति आन्दोलन जैसा बड़ा सुधारवादी आन्दोलन हो चुका था जिसका व्यापक असर रवीन्द्रनाथ जैसे विश्वकवि पर भी पड़ा था (उल्लेखनीय है कि रवीन्द्रनाथ ने कबीर के एक सौ पदों का अंग्रेजी में अनुवाद किया था. उन्होंने सूर और तुलसी पर कविताएं लिखी थीं) रामविलास शर्मा ने इस भक्ति आन्दोलन को लोक जागरण का काव्य कहा है. किन्तु अपनी इस विरासत से हिन्दी सिनेमा ने कुछ भी ग्रहण नहीं किया. इसका मुख्य कारण यही है कि हिन्दी फिल्मों के निर्माता, हिन्दी की जातीय संस्कृति से गहराई से परिचित नहीं थे. इतना ही नहीं, वे परिचित होने की कोशिश भी नहीं करते हैं. प्रकाश झा को छोड़ दें तो हिन्दी सिनेमा का एक भी बड़ा निर्माता हिन्दी क्षेत्र का नहीं दिखवाई देता. हिन्दी के जायादातर दर्शक भी सुसंस्कृत नहीं हैं. हिन्दी की

आर्ट फिल्में आमतौर पर असफल साबित होती रही हैं. हिन्दी फिल्मों का अधिकांश दर्शक या तो मारधाड़ और सेक्स देखने सिनेमा हालों में जाता है या हँसने के लिए. किसी तरह का संदेश देने वाली कलात्मक और गंभीर फिल्में हिन्दी दर्शकों को बोर करती है. इस तरह के संस्कार उनमें विकसित नहीं हो सके हैं. इसीलिए हिन्दी कला फिल्मों के निर्माण के बारे में निर्माता हजार बार सोचता है. बांग्ला में स्थिति इससे बिलकुल अलग है. वहाँ कला फिल्में इस तरह फ्लाप नहीं होतीं. वहाँ कला और व्यावसायिक फिल्मों के अनुपात के आधार पर अंतर आसानी से समझा जा सकता है. इससे पता चलता है कि हिन्दी की तुलना में बांग्ला फिल्मों के दर्शक अधिक सुसंस्कृत और संपन्न अभिरुचि के हैं.

सत्यजीत रे अपनी फिल्मों में जिस विरासत को लेकर चल रहे थे वह बंगाल का पुनर्जागरण था. राजा राम मोहन राय, केशवचंद्र सेन, ईश्वरचंद विद्यासागर और रवीन्द्रनाथ टैगोर ने जिस संस्कृति और दर्शन को प्रतिष्ठित किया था सत्यजीत रे ने उसी विचारधारा को आत्मसात किया और उसे ही अपने सिनेमा में अभिव्यक्त किया. उनकी क्लासिक कृति 'पाथेर पांचाली' में आलोचकों को भारतीय जन नाट्य संघ की परंपरा के साथ साम्य दिखायी देता है क्योंकि इसमें ग्रामीण बंगाल में व्याप्त निर्धनता की परिस्थितियों का चित्रण है लेकिन वह परिवार जिसके जीवन को उन्होंने कथ्य बनाया है पहले के संपन्न वर्ग से संबंधित था. इतना ही नहीं, 1981 में सत्यजीत रे द्वारा बनाई गई फिल्म 'सद्गति', जो प्रेमचंद की इसी नाम से प्रकाशित कहानी पर आधारित है, यह प्रदर्शित करती है कि हिन्दू समाज में सबसे निचले तबके का एक जाति च्युत व्यक्ति भी हिन्दू धर्म के सामाजिक नियमों से कितनी मजबूती से जकड़ा हुआ है.

यह सही है कि हिन्दी सिनेमा के निर्माता अहिन्दी भाषी ही अधिक हैं और जैसा कि प्रेमचंद ने लिखा है कि पैसा कमाना ही उनका मुख्य

उद्देश्य रहता है किन्तु हिन्दी सिनेमा के इस दमघोंटू वातावरण में भी श्याम बेनेगल, विमल राय, गोविंद निहलानी, मृणाल सेन, के.ए. अब्बास, गौतम घोष, केतन मेहता, कुमार शाहनी, एम.एस. सथ्यू,, जाह्नु बरुआ, बासु चटर्जी, बासु भट्टाचार्य, मणि कौल, सागर सरहदी तथा अपर्णा सेन जैसे निर्माताओं की उपस्थिति से हिन्दी सिनेमा समृद्ध हुआ है. हिन्दी दर्शकों के हिस्से में ऐसी फिल्में भी आईं जिनसे उनकी सामाजिकता समृद्ध हुई. श्याम बेनेगल की 'मंडी' और अपर्णा सेन की 'परमा' जैसी फिल्में स्त्री शोषण, उत्पीड़न और विद्रोह पर आधारित हैं. इन फिल्मकारों की 'आक्रोश', 'भुवन सोम', 'अर्धसत्य', 'आघात', 'दामुल', 'परिणति', 'गर्म हवा', 'सूखा', 'पार', 'मंथन', 'अंकुर', 'निशांत', 'सारा आकाश', 'रजनी गंधा', 'दुविधा', 'माया दर्पण', 'अनुभव' आदि फिल्मों ने समाज को बेहतर संदेश देने का जोखिम उठाया और सिनेमा के प्रति एक उम्मीद जगायी. किन्तु यह उम्मीद अधिक समय तक कायम नहीं रह सकी और लोकप्रिय सिनेमा के पैरोकारों के सामने कला फिल्मों की यह दुनिया सिकुड़ती चली गई. लोकप्रिय फिल्मकारों के अपने तर्क हैं. उनके अनुसार फिल्मों में प्रदर्शित हिंसा, सेक्स, बलात्कार, नग्नता, अश्लीलता, व्यभिचार, चरित्रहीनता आदि हमारे समाज के यथार्थ हैं. किन्तु सचाई यह है कि सिनेमा में प्रदर्शित होने वाली ये विद्रूपताएं समाज में अधिक बिकती हैं, उसमें मुनाफा ज्यादा है. और जाहिर है, सिनेमा एक उद्योग है जिसका मुख्य उद्देश्य मुनाफा कमाना ही है.

नब्बे के दशक में सोवियत संघ के विघटन और अमरीकी साम्राज्यवाद के नेतृत्व में आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के विशवव्यापी प्रसार से हिन्दी फिल्में बुरी तरह प्रभावित हुई हैं. इन दिनों निर्मित हिन्दी फिल्में एक ओर यदि अभिजातवर्ग की परिवार केन्द्रित भावनात्मक समस्याओं को लोकप्रिय मुद्दा बना रही हैं तथा उदारीकरण तथा निजीकरण से उत्पन्न समाज के एक हिस्से की समृद्धि को महिमा-मंडित कर रही हैं तो दूसरी ओर समाज के अपराधीकरण को भी महिमा

मंडित कर रही हैं. वैश्वीकरण के बाद माफिया गिरोहों की कारस्तानियों को कई तरह से और बार- बार फिल्माया गया है.

विगत दो दशकों में हिन्दी सिनेमा ने अपनी बची – खुची जातीय और लोक परंपराओं को भी काफी हद तक भुला दिया है. अब हिन्दी फिल्मों का संबंध ग्रामीण यथार्थ से लगभग खत्म हो चुका है. मल्टीप्लेक्स के आगमन ने हिन्दी सिनेमा की पूरी संस्कृति को ही बदल कर रख दिया है. पहले बड़े- बड़े सिनेमा हालों में समाज के सभी तबकों के लोग एक साथ बैठकर फिल्में देखते थे. यद्यपि वहाँ भी दर्शकों में स्तर - भेद था और टिकटों के दाम अलग -अलग थे किन्तु आज की तरह नहीं. आज मल्टिप्लेक्स में एक साथ तीन- तीन चार -चार फिल्में दिखायी जाती हैं. अंग्रेजी बोलने वाला उच्च और उच्च मध्य वर्ग अपने समकक्ष दर्शकों के साथ बैठकर छोटे- छोटे हालों में फिल्में देखता है. इन्हीं दर्शकों को ध्यान में ऱखकर आज फिल्मों का उत्पादन भी हो रहा है.

इस सदी के पहले दशक और उसके आस- पास बनने वाली हिन्दी फिल्मों के शीर्षकों पर यदि नजर दौड़ाएं तो इस परिवर्तन की कुछ बानगी देखी जा सकती है. पहले जहाँ शीर्षक शुद्ध हिन्दी या हिन्दुस्तानी में हुआ करते थे, वहाँ अब 'वैलडन अब्बा' (2010), 'मेरे ब्रोदर की दुल्हन' (2011), 'डबल धमाल' (2011), 'आलवेज कभी कभी (2011), 'एक था टाईगर' (2012) 'साहब, बीबी और गैंगस्टर्स रिटर्न' (2013), 'चेन्नई एक्सप्रेस' (2013) जैसे शीर्षकों वाली फिल्मों की बाढ़ आ गई. हिन्दी जाति के पिछड़ेपन का यह एक खास नमूना है. पिछले दिनों तो हिन्दी फिल्मों के पूरे के पूरे शीर्षक ही अंग्रेजी के देखे गए. जैसे 'बाडीगार्ड' (2011), 'दी डर्टी पिक्चर' (2011), 'वन्स अपोन ए टाईम इन मुम्बई' (2010), 'सन आफ सरदार' (2012), 'शूट आउट ऐट वडाला' (2013), 'स्पेशल -26' (2013),'पीके' (2014) आदि.

कला-फिल्मों पर थोड़ी अलग से चर्चा जरूरी है. सातवें दशक के आरंभ से सिनेमा का मूल्यांकन कलात्मक आधार पर उसे दो वर्गों में बांटकर किया जाने लगा.- कला सिनेमा (आर्ट फिल्म) और लोकप्रिय सिनेमा (पापुलर फिल्म). लोकप्रिय सिनेमा की प्रतिक्रिया में साठ के दशक से ही फिल्मकारों का अलग वर्ग उभरना शुरू हो गया था जिसे 'समान्तर सिनेमा', 'कला सिनेमा' और 'नया सिनेमा' जैसे नामों से पुकारा जाने लगा. इस तरह की फिल्मों की विशेषताओं में छोटा बजट, यथार्थ पर केन्द्रित विषय वस्तु और भारतीय दृश्य महत्वपूर्ण है. भारत में कला सिनेमा की आन्तरिक प्रेरणा के स्रोत सत्यजित रे माने जाते हैं जिन्होंने 1955 में 'पाथेर पांचाली' बनाकर विश्व सिनेमा में भारतीय सिनेमा को जगह दिलायी. हिन्दी को छोड़कर बाकी भाषाओं में कला फिल्मों नें अपने स्थाई दर्शक बना लिए तथा उनकी निर्माण गति तुलनात्मक रूप से ज्यादा है. व्यावसायिक सिनेमा के माफियओं ने भी कला फिल्मों के प्रदर्शन और वितरण को बुरी तरह प्रभावित किया है. प्रख्यात अभिनेता उत्पल दत्त के शब्दों में, " ये (माफिया) लोग सत्यजित रे की किसी फिल्म को अनिश्चित काल तक रोके रख सकते हैं, मृणाल सेन को बांग्ला से खदेड़कर तेलुगू में फिल्म बनाने पर मजबूर कर सकते हैं, सथ्यू 'गर्म हवा' के धमाके के बाद कोई दूसरी हिन्दी फिल्म नहीं बना सके." (उत्पल दत्त का लेख, भारतीय सिनेमा : गुस्सा करने का समय, इतिहास बोध, सिनेमा अंक-19, पृष्ठ-8)

हिन्दी जाति के संगीत को 'हिन्दुस्तानी संगीत' कहा जाता है. संगीत की इस दुनिया में उर्दू – हिन्दी का बँटवारा नही किया जा सका है. हम आज भी हिन्दी के जातीय संगीत को 'हिन्दुस्तानी संगीत' ही कहते हैं. इस संगीत का इतिहास वैदिक काल से शुरू होता है. इसकी परंपरा को हिन्दी जाति के जिन दिग्गजों ने समृद्ध किया है उनमें हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी. तानसेन इस परंपरा के सिरमौर हैं. आधुनिक काल में इसे उस्ताद बिस्मिल्ला खां, अमजद अली खां जैसे मुसलमानों से लेकर पंडित

रविशंकर तक और उधर सुरैया, मोहम्मद रफी से लेकर मन्ना डे, महेन्द्र कपूर, किशोर कुमार और लता मंगेस्कर तक सबने मिलकर समृद्ध किया है. हिन्दी के भक्ति साहित्य का संगीत से घनिष्ठ संबंध का विशलेषण करते हुए रामविलास शर्मा ने संगीत के इतिहास पर एक पूरी पुस्तक लिखी है. उनकी मान्यता है कि हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत दोनो को भक्ति साहित्य की महत्वपूर्ण देन है. उनके अनुसार ध्रुपद और धमार गायकी ब्रज की थी और वहीं से वह ग्वालियर – आगरा और फिर दिल्ली के दरबारों में पहुंची थी. यही ब्रज भाषा काव्य की भी भाषा थी और संगीत की भी. यही हिन्दुस्तानी संगीत और हिन्दी साहित्य के वैभव का युग भी है. आचार्य बृहस्पति का उद्धरण देते हुए रामविलास शर्मा ने हिन्दी भाषा, ब्रज और हिन्दुस्तानी संगीत में अमीर खुसरो की देन को बड़े आदर के साथ याद किया है. वे ब्रज में जन्मे थे. उसके बाद अवध और फिर दिल्ली पहुंचे थे. अमीर खुसरो की रुझान शास्त्रीय संगीत की तुलना में लोक संगीत पर अधिक थी. रामविलास शर्मा के अनुसार संतों की संस्कृति जनवादी थी. उनके पद, लोकगीतों की ही एक उठी हुई लहर थी. इसीलिए आज भी शास्त्रीय गायक सूर –मीरा के पद गाते या साज पर कोई लोकधुन बजाते हैं या फिर गायिकाएं कजरी इत्यादि से समापन करती हैं और इस तरह संगीत के मूल स्रोत को प्रणाम करती हैं. तानसेन की संगीत की इस परंपरा को परवर्ती काल में मल्लिकार्जुन मंसूर, पलुस्कर, उस्ताद फैयाज खाँ, बड़े गुलाम अली खाँ, भीमसेन जोशी, सिद्धेश्वरी देवी, किशोरी मोनकर, पंडित रविशंकर, बिस्मिल्ला खां, अलाउद्दीन खां जैसे संगीतकारों ने समृद्ध किया है. हिन्दी प्रदेश से ही हिन्दी भाषियों का यह जातीय संगीत पश्चिम में महाराष्ट्र और पूर्व में बंगाल तक फैला है.

लोकभाषाओं में संचित आंचलिक साहित्य और शासक वर्ग की भाषा में रचित शिष्ट साहित्य के बीच का चरित्रगत भेद उसके साहित्य में साफ दिखायी देता है भले ही उसपर अभी पंडितों की पैनी और

वैज्ञानिक दृष्टि न पड़ी हो. आंचलिक साहित्य, जिसे मैं लोक साहित्य कहना अधिक उपयुक्त समझता हूं बहती नदी के समान होता है, फलत: बहने के क्रम में धारा बहुत कुछ छोड़ देती है और इसी तरह नए तत्वों को अपने साथ बहाकर ले भी जाती है. लोक अपने आनंद में उसी तरह उत्फुल्ल होता है जैसे प्रकृति होती है. इसीलिए लोक का रचनात्मक आनंद कहीं भी व्यक्तिगत नहीं है. इस आनंद पर सबका अधिकार है. लोक गायकी में व्यक्तिगत गायकी है ही नही. औरत और पुरुष सामूहिक रूप से सोहर, फाग, कजरी, चैता आदि गाते हैं. अनेक सुरों की एकतानता से न किसी का अहंकार व्यक्त होता है न किसी की हीनता. लोक की समस्त जीवन पद्धति और उसकी समस्त कला संरचनाओं का मूल लक्ष्य सत्य के करीब पहुँचने के साथ आत्म-मुक्ति के आनंद को प्राप्त करना होता है. अपनी भावनाओं के विस्तार के लिए उसने प्राकृतिक उद्दीपनों को अपनी काव्य चेष्टाओं में अभिव्यक्त किया है. वसंत, वर्षा, शरद्, ग्रीष्म आदि के अनुभवों ने उसके भीतर जो संवेदनाएं जागृत कीं उन्हीं संवेदनाओं के परिणाम स्वरूप उसने लोक कलाओं के स्फुरणों को समेटा है. चांचर, फाग, धमार, कजरी जैसी लोक गायकी में ऋतु उद्दीपनों के साथ जैविक अनुभूतियों की अनुगूंज भी लय संरचना के रूप में रही होगी. उसके विषय वृत्त में क्रमश: फैलाव आता गया.

इस तरह सारी दुनिया में हिन्दी फिल्मों ने अपने गीतों के माध्यम से हिन्दी भाषा और हिन्दी की जातीय संस्कृति को फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है फिर भी हिन्दी की जातीय संस्कृति के प्रति हमारे देश के आम नागरिकों में सम्मान का भाव नहीं जाग सका है और न तो हिन्दी समाज ही अपनी विरासत को ठीक से पहचान सका है. खेद है, दुनिया के सामने आज भी हिन्दी जाति की अपेक्षित सम्मान जनक छबि निर्मित नहीं हो सकी है.

(लेखक कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर और हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं)

मनीमाजरा: कहानी एक रियासत की

□ सुरेन्द्र पाल सिंह

अभी पिछले दिनों एक हॉलीवुड फ़िल्म ज़ीरो डार्क थर्टी को ऑस्कर अवार्ड मिला है जिसकी कहानी 9/11 के बाद ओसामा बिन लादेन की तलाश पर आधारित है। इस फ़िल्म की शूटिंग मनीमाजरा के किले में हुई थी। मनीमाजरा एक रियासत थी जो वर्तमान में चंडीगढ़ यूटी का हिस्सा है और पंचकूला से सटा हुआ है।

एक बड़े मोटर मार्केट और पुराने शहर की भीड़भाड़ वाले बाज़ार के लिए मशहूर मनीमाजरा का एक रोचक इतिहास है। अभी क़रीब दो वर्ष पहले कोर्ट का एक फ़ैसला समाचारों की सुर्खियों में छाया रहा जिसके अनुसार फ़रीदकोट रियासत की लगभग दो हज़ार करोड़ रुपये की प्रॉपर्टी फ़रीदकोट की राजकुमारी अमृत कौर और दीपिन्द्र कौर के के हक़ में हो गई है। इन प्रॉपर्टी की लंबी सूची में मनीमाजरा का क़रीब 350 वर्ष पुराना किला भी शामिल है जो फ़िलहाल चार एकड़ में फैले हुए खंडहर के रूप में मौजूद है।

गुरुद्वारा मंजी साहब (माता राजकौर जी)

किले के नज़दीक एक ऐतिहासिक गुरुद्वारा मंजी साहब है। मंजी साहब की परंपरा तीसरे गुरु अमरदास जी के वक़्त शुरू हो कर पांचवे गुरु अर्जनदेव जी के समय तक एक सुचारू रूप ले चुकी थी जिसके अनुसार तत्कालीन गुरु के नाम से एक चारपाई बिछाकर उसके बगल में गुरबाणी

का पाठ किया जाता था और श्रद्धालुओं से उनकी कमाई का दसवां हिस्सा दान के रूप में लिया जाता था।

सातवें गुरु हरराय जी (1645-61) के औरंगजेब के भाई दारा शिकोह से दोस्ताना संबंध थे। उत्तराधिकार की लड़ाई में दारा शिकोह का क़त्ल करवा करवाके औरंगजेब जब सन 1658 में बादशाह बना तो उसने गुरु हरराय को दरबार में पेश होने का फ़रमान जारी कर दिया था जिसके एवज़ में गुरु जी ने अपने बेटे श्री रामराय को दरबार में भेजा था। श्री रामराय के व्यवहार और व्यक्तित्व से औरंगजेब संतुष्ट था और नतीज़न बादशाह के आशीर्वाद और गढ़वाल के राजा की सहायता से दून घाटी के खैराबाद इलाके में श्री रामराय ने अपने डेरे की स्थापना कर ली थी जो कालांतर में देहरादून के नाम से फला फूला।

सन 1664 में आठवें गुरु हरीकिशन जी की दिल्ली में सवाई राजा जयसिंह की हवेली में रहते हुए 9 वर्ष की आयु में चेचक से मृत्यु हो गई थी जहां आजकल गुरुद्वारा बांगला साहब है। आठवें गुरु के बाद नौवें गुरु तेगबहादुरजी हुए। इस दौरान श्री रामराय ने अपने आप को पहले आठवें और बाद में नौवें गुरु के तौर पर घोषित करवाने का असफल प्रयास किया था।

मनीमाजरा के ऐतिहासिक गुरुद्वारा में परिचय बोर्ड पर जो इबारत लिखी है उसके अनुसार देहरादून से श्री रामराय की धर्मपत्नी माता राजकौर श्री रामराय जी से नाराज होकर मनीमाजरा आकर बस गई थी। उनका मकान जब बारिश में टपकने लगा था तो उन्होंने अपने सेवक को भारमल के पास शहतीर को संभालने के लिए लकड़ी का लट्ठा लाने को भेजा जिसकी भारमल ने कोई परवाह नहीं की। लेकिन ग़रीबू जट्ट नाम के एक व्यक्ति ने श्रध्दापूर्वक रात के समय में भी इसका इंतजाम कर दिया जिससे प्रसन्न होकर माता राजकौर ने गरीबू को राजा होने का आशीर्वाद दिया और माता जी के आशीष के अनुसार गरीबू एक दिन

राजा गरीब दास हो गया। इस घटना का हवाला भाई संतोख सिंह द्वारा सन 1843 में प्रकाशित ग्रंथ 'गुरप्रताप सूरज प्रकाश' से लिया गया है। इसी बोर्ड पर एक और घटना का जिक्र है कि विक्रमी संवत 1745 (सन 1688) में गुरु गोविंद सिंह ने पहाड़ी राजाओं से भंगानी की लड़ाई जीतकर आनंदपुर साहब के लिए वापस लौटते हुए कपाल मोचन से चल कर रायपुर रानी होते हुए माता राज कौर के पास निवास किया था। इसी बोर्ड पर यह भी लिखा है कि माता राजकौर का अंगीठा (अंतिम संस्कार स्थल) बगल में ही गुरुद्वारा देहरा साहब में है।

ऐतिहासिक संदर्भ क्या कहते हैं?

सातवें गुरु हरराय जी ने अपने बेटे श्री रामराय से संबंध विच्छेद कर लिया था जब उन्हें पता चला कि श्री रामराय ने औरंगजेब की नाराजगी से बचने के लिए नानक की एक बाणी को 'मुसलमान' शब्द के बदले 'बेईमान' शब्द बोल कर पेश किया था। मनीमाजरा में स्थित गुरुद्वारा मंजी साहब में लगे हुए परिचय बोर्ड के अनुसार इसी आशय से श्री रामराय की धर्मपत्नी माता राजकौर का श्री रामराय से नाराज होकर मनीमाजरा आकर बस जाने और यहीं पर उनकी मृत्यु का होना बताया गया है। लेकिन इन बातों पर आंख मूंद कर यकीन नहीं किया जा सकता।

यह सच है कि श्री रामराय ने अपनी गद्दी को सिक्ख पंथ की मुख्यधारा से दूर रखते हुए उदासीन पंथ का हिस्सा बना लिया था। यह प्रमाणित तथ्य है कि गुरु गोबिन्द सिंह भंगानी की लड़ाई के बाद सन 1688 में पोंटा साहब से वापस आनंदपुर साहब लौटते हुए रास्ते में पड़ाव करते रहे थे और नाड्डा साहब में उनका एक लंबा पड़ाव था। इसी दौरान बगल में ही माता राजकौर से उनकी मुलाकात संभव है। लेकिन इस संबंध में कुछ तथ्य संशय पैदा करते हैं।उल्लेखनीय है कि श्री रामराय की मृत्यु सन 1687 में हो गई थी और देहरादून में उनकी गद्दी के स्थान पर

एक शानदार प्रांगण में माता राज कौर सहित उनकी चारों धर्मपत्नियों के सुंदर समाधिस्थल भी स्थित हैं। गुरु नानक की बाणी को त्रुटि सहित पेश करने का वक़्त तो सातवें गुरु हरराय जी के वक़्त सन 1661 से पहले की घटना है। तो क्या माता राजकौर तभी मनीमाजरा आ गई थी और सन 1688 में श्री रामराय की मृत्यु के अगले वर्ष भी यहीं पर थी? और, उनका समाधिस्थल देहरादून में भी है। दूसरी बात, राजा गरीब दास की मृत्यु सन 1783 में हुई थी। ऐसे में यह संभव प्रतीत नहीं होता है कि करीब सौ वर्ष पहले उसने माता राजकौर की सेवा की हो। अगला तर्क यह है कि मंजी साहब की परंपरा तीसरे गुरु अमरदास जी से शुरू होकर पांचवें गुरु अर्जन देव जी तक सुव्यवस्थित हो गई थी जिसके अनुसार भिन्न-भिन्न केंद्रों में तत्कालीन गुरु के नाम पर एक चारपाई बिछाई जाती थी और वहां पर गुरबाणी का पाठ होता था। यह परंपरा लंबे समय तक चलती रही जब तक गुरु गोबिंद सिंह ने इसको नकार नहीं दिया। मनीमाजरा का गुरुद्वारा माता राजकौर के निवास स्थान पर बनाया गया है और यह मंजी का केंद्र भी रहा है, ये दोनों दावे अंतर्विरोधी प्रतीत होते हैं।

राजा गरीब दास

तत्कालीन अंग्रेज इतिहासकार लेपल एच ग्रिफिन ने अपनी पुस्तक 'Rajas of Punjab' में उल्लेख किया है कि गंगादास सरहिंद के गवर्नर के अधीन एक टैक्स अधिकारी था और सन 1764 में सरहिंद के मुग़ल फौजदार ज़ेन खान की मृत्यु के पश्चात जब पूरा इलाका अराजकता के दौर से गुजर रहा था तो इस दौरान गंगादास ने सूरजगढ़ इलाके के 84 गाँवों पर अधिकार जमा लिया था। गंगादास और उसके पुत्र गरीब दास ने सन 1768 में पिजौर के किले पर कब्ज़ा कर लिया था जो सिरमौर के राजा के अधीन था। सिरमौर के राजा ने पटियाला की सहायता से पिंजौर का किला छुड़वाया जिसमें गंगादास की मृत्यु हो गई थी। लेकिन इसी

दौरान राजा गरीब दास वर्तमान मनीमाजरा में स्थित सूरजगढ़ के इलाके का शासक बन बैठा। राजा गरीब दास की सन 1783 में मृत्यु के बाद उसका पुत्र गोपाल सिंह राजा बना जिसने सन 1811-15 में मनसा देवी मंदिर की स्थापना की। कहा जाता है कि किले से मंदिर तक सुरंग से भी एक रास्ता था और एक बार पटियाला का महाराजा कर्म सिंह (1813-45) मंदिर के कपाट खुलने की प्रतीक्षा कर रहा था तो इसी दौरान सुरंग के रास्ते मनीमाजरा के किले से राजा वहां पहले से ही पहुंच गया। इस घटना के बाद महाराजा कर्म सिंह ने बगल में ही एक नया मंदिर बनवाया था जिसे पटियाला का मंदिर कहा जाता है। सन 1814 में गुरखा हमले के खिलाफ राजा गोपाल सिंह ने अंग्रेज फौज का साथ दिया और एवज में गोपाल सिंह को अधिकारिक रूप से राजा की पदवी मिल गई। इनकी पीढ़ी से ही राजा गोवर्धन सिंह सन 1845 में मुदकी में हुए एंगलो-सिक्ख युद्ध में अंग्रेजो की तरफ से लड़ा। मनीमाजरा के राजाओं की श्रंखला में अंतिम राजा भगवान सिंह था जिसके बाद सन 1875 में मनीमाजरा का शासन प्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजों ने अपने हाथ में ले लिया।

मनी माजरा का नामकरण

राजा भगवान सिंह ने करीब एक किलोमीटर दूरी पर स्थित मन्ना गांव के लोगों को किले के आसपास बसने को उत्साहित किया और इस प्रकार सूरजगढ़ किले का नाम मन्ना से मनीमाजरा हो गया।

किले की प्रॉपर्टी का झगड़ा

पाठकों के जेहन में एक सवाल बार बार उठता होगा कि कहां फ़रीदकोट और कहां मनीमाजरा। इतना दूर होने के बावजूद फ़रीदकोट रियासत के वारिसों के बीच हजारों करोड़ की प्रॉपर्टी के झगड़े की सूची

में इस वक्त खंडहर बन चुका मनीमाजरा का किला क्यों शामिल है? उल्लेखनीय है कि इस वक़्त किले के खंडहरों में कोई बाहरी व्यक्ति प्रवेश नहीं कर सकता है। किले के एक छोटे से हिस्से को रिहायशी रूप दिया हुआ है जिसमें कुछ लोग रहते हैं। चंडीगढ़ पुलिस के कुछ सिपाही भी किले की चारदीवारी के गेट पर तैनात हैं। फिलहाल फ़रीदकोट रियासत की तमाम प्रॉपर्टी सन 1981-82 में बने महारावल खिवजी ट्रस्ट की देखरेख में है और मनीमाजरा का किला भी उसमें शामिल है। ट्रस्ट के दावा है कि फ़रीदकोट के अंतिम महाराजा हरिंद्र सिंह बराड़ ने सन 1989 में अपनी मृत्यु से पहले रियासत की तमाम प्रॉपर्टी ट्रस्ट के नाम कर दी थी लेकिन शाही परिवार से बाहर शादी करने के कारण बेदखली की भुगतभोगी राजकुमारी अमृतकौर ट्रस्ट के इस दावे को फर्ज़ी ठहराते हुए लम्बे अर्से से कानूनी लड़ाई लड़ रही है। इस ट्रस्ट को पंजाब-हरियाणा हाईकोर्ट ने अवैध ठहरा दिया है लेकिन मुकदमा अभी सुप्रीम कोर्ट में लंबित है।

अंतिम राजा भगवान सिंह की बेटी राजकुमारी सूरज कौर फ़रीदकोट के टिक्का साहब बलबीर सिंह बराड़ के साथ ब्याही गई थी जो बाद में सन 1898 से 1906 तक फ़रीदकोट के महाराजा थे। राजा भगवान सिंह का कोई पुत्र नहीं था और इस प्रकार उसकी वारिस की प्रॉपर्टी फ़रीदकोट रियासत की प्रॉपर्टी का हिस्सा बन गई।

सन्दर्भ:

1. Rajas of Punjab: Lepel H Griffin

2. An empirical study on Guru Ram Rai Darbar, a living heritage: Ar. Ramanjyot Shrivastva, Prof. SYK Kulkarni and Dr. Prabhjot Kaur

3. A Tale of Fort(itude): Pallavi Singhal

4.The Faridkot Saga: Pavan Lall.

हाथरस प्रकरण पर तथ्यान्वेषी दल की रिपोर्ट

□ डॉ.पूनम तुषामड़

बीते 11 अक्टूबर, 2020 को दिल्ली से सात लोगों का एक तथ्यान्वेषी दल उत्तर प्रदेश के हाथरस जिले के बूलगढ़ी गांव के लिए रवाना हुआ। इस दल में प्रो. हेमलता महिश्वर, डॉ.रजत रानी मीनू, डॉ. बजरंग बिहारी तिवारी,डॉ. सीमा माथुर, डॉ. पूनम तुषामड़, फारवर्ड प्रेस के हिंदी संपादक नवल किशोर कुमार व मीडियाकर्मी मनोज पिप्पल शामिल थे।

वहां जाने का हमारा उद्देश्य बीते 14 सितम्बर, 2020 को घटित एक आपराधिक घटना जिसमें एक दलित लड़की मनीषा वाल्मीकि (काल्पनिक नाम) के साथ उसके ही गांव के तथाकथित सवर्ण (ठाकुर)

जाति के युवकों ने सामूहिक बलात्कार के पश्चात रीढ़ की हड्डी तोड़ दी और ज़ुबान काट दी। पीड़िता ने 15 दिनों के बाद 29 सितम्बर को दिल्ली के सफ़दरजंग अस्पताल में दम तोड़ दिया। इसके पश्चात् यूपी पुलिस ने पीड़िता का शव बिना उसके परिवार की मर्जी के उसी रात करीब ढाई बजे जला दिया। जबकि उसके परिजन अंतिम समय तक विनती करते रहे कि उन्हें अपने रीति-रिवाज के अनुसार मनीषा का अंतिम संस्कार करने दिया जाय। सामूहिक बलात्कार की इस जघन्य घटना के संबंध में मीडिया द्वारा कई प्रकार की खबरें आशय प्रकाशित/प्रसारित की गयीं। इन खबरों से भ्रम की स्थिति उत्पन्न हुई।

तथ्यान्वेषी दल का उद्देश्य मृतका के गांव जाकर तथ्यों की तलाश करना और सामाजिक आर्थिक दृष्टि से उनका समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना था।

घटना स्थल पर हमें वंचित बहुजन अघाड़ी के राष्ट्रीय अध्यक्ष व पूर्व सासंद प्रकाश आंबेडकर भी मिले। वे मनीषा के परिजनों से मिलने तथा उन्हें सांत्वना देने पहुंचे थे।

हाथरस से बूलगढ़ी गांव की दूरी लगभग 8 किलोमीटर है। हम जब हाथरस पहुंचे तो हमने देखा कि वहां से थोड़ी-थोड़ी दूरी पर पुलिसकर्मियों की सामूहिक तैनाती थी और जगह-जगह पर बैरिकेडर मिले। गांव से करीब 1 किलोमीटर पर ही पुलिस थाना चंदपा है, जहां मृतका के परिवार ने सबसे पहले सामूहिक बलात्कार और हिंसात्मक अत्याचार की प्राथमिकी दर्ज करायी थी।

मृतका के घर में ही तैनात एक पुलिसकर्मी ने बताया कि आरोपी पक्ष के लोगों ने अभी कुछ दिन पहले भी हमला करने की कोशिश की गई थी। इसलिए इनकी सुरक्षा बढ़ाई गई है। अगर पुलिस वाले की बात सच है तो मनीषा की भाभी तथा पिता का भय बिलकुल वाजिब है,

क्योंकि जब इतने पुलिस बल की मौजूदगी में आरोपी पक्ष के लोग हमला करके धमका सकते हैं तो वे पुलिस के नहीं रहने पर क्या नहीं कर सकते।

बूलगढ़ी जाने वाले रास्ते से लेकर मृतका के घर तक भारी संख्या में पुलिसकर्मी तैनात दिखे। यह कहना गैरवाजिब नहीं कि पूरे गांव को ही पुलिस छावनी में तब्दील कर दिया गया है। गांव के अंदर घुसने से पहले ही पुलिस एवं इंटेलिजेंस ब्यूरो के कुछ लोगों ने हमारा परिचय लिखित में लिया। हमें बताया गया कि एक बार में केवल पांच लोगों को ही जाने दिया जा सकता है। हमें अपनी टीम को दो हिस्सों में विभाजित करना पड़ा और इसके लिए पृथक रूप से लिखित में सूचनाएं देनी पड़ी। तब हमें जाने की अनुमति दी गयी।

गांव में कुछ लोग बाजरे और धान की फसल काट रहे थे। गांव में दलितों के केवल चार ही घर हैं। गांव में अधिकतर घर पक्के हैं। घरों और रहन-सहन को देखते हुए ठाकुरों और दलितों में ज्यादा बड़ा अंतर नहीं दिखा। किन्तु आर्थिक और सामाजिक स्तर पर अंतर साफ़-साफ़ नज़र आता है। स्थानीय लोगों से जानकारी मिली कि गांव में 4 घर दलितों के, 2 घर प्रजापति जाति के लोगों के, एक घर नाई जाति, 20-25 घर ब्राह्मणों के तथा करीब 40 परिवार ठाकुरों के हैं।

मृतका के घर पहुंचने पर सबसे पहले एक बड़ा सा आंगन दिखा, जिसमें परिजनों से मिलने से पहले भी हम सभी को अपना नाम ,पद और फोन नंबर देना पड़ा। इस आंगन में एक ओर पुलिसकर्मियों के रहने का इंतज़ाम है। वहीं दूसरी ओर पीड़ित पक्ष के ही सदस्यों के दो कमरे हैं। एक ओर उनकी दो भेंसें और 4-5 बकरियां बंधी थीं। कई मुर्गियां भी थीं। वहां एक कोने में सूअरों के बाड़े भी बने हुए थे, किन्तु सूअर नहीं थे। जब एक पुलिसकर्मी से पूछा कि "ये भेंसें, बकरियां ओर मुर्गियां किसकी हैं तो उसने बड़े अनमने ढंग से जवाब दिया कि "इन्हीं लोगों (मृतका के परिजनों) के हैं। यह पूछने पर कि ये जो सूअर बाड़े बने हैं तो क्या ये लोग

सूअर भी पालते हैं? उसने धीरे से कहा कि "यही तो.."। इसी बीच एक ने कहा कि "जिसका जो काम है वो तो करेगा ही"। उस पुलिस कर्मी ने यह भी कहा कि "यही तो बात है जी, देखो बराबरी तो न हो सके है ."

दल की सदस्या प्रो. सीमा माथुर ने जब पुलिस अधिकारी से पूछा कि आप लोग यहां कब से हैं तो वहां मौजूद एक अधिकारी ने बताया कि हम यहां 30 सितम्बर से हैं। आपका खाना पानी क्या यहीं इसी घर में होता है? पुलिस अधिकारी तुरंत बोला कि "नहीं जी, हमारा खाना तो बाहर से बन कर आता है। बाहर ही एक होटल है।" एक दूसरे पुलिसकर्मी ने कहा कि "जी, 150 लोगों की कंपनी है। सब का खाना वहीं से आता है।" पीने के पानी की समस्या बताते हुए उस पुलिसकर्मी ने कहा कि "पानी की यहां बहुत दिक्कत है। खुद हमारे लिए पीने का पानी नहीं मिलता। पानी तभी मिलता है जब बिजली रहती है।"

उक्त पुलिसकर्मी के कथनानुसार, गांव में बिजली की समस्या रहती है। परंतु हम लोगों देखा कि वहां दिन में भी बिजली के खंभों पर बल्ब जल रहे थे। हमने देखा कि मृतका के आंगन से लेकर पूरे घर में सात-आठ सीसीटीवी कैमरे लगे थे। उसी पुलिसकर्मी के कथनानुसार चार- पांच दिन से उस घर तथा उसके आसपास पूरी बिजली दी जा रही थी। उसी पुलिसकर्मी से पूछने पर कि आप को क्या लगता है? लड़की के साथ क्या हु? उस अधिकारी का कहना था कि "देखो जी, लड़की मारी तो गई है। किसने मारा, क्यों मारा? ये हमें नही पता .

हम मृतका के परिजनों से मिलने उसके घर में गए, जहां पहले से ही बड़ी संख्या में पुलिसकर्मी, मीडियाकर्मी और अन्य लोग मौजूद थे। हमने देखा कि घर में दो कमरे, बरामदा तथा एक बिना सुरक्षा दीवार की सीढ़ी बेशक परिजनों ने बना ली हैं, किन्तु रसोई और टॉयलेट अच्छी स्थिति में नहीं है। वहां हमने करीब चार फुट ऊंचा एक खुला स्नान गृह भी देखा।

मृतका के परिजनों में सबसे पहले हमने उसकी माँ से बातचीत की, जो केवल एक ही बात कहे जा रही थीं कि "मेरी बेटी के हत्यारों को सजा होनी चाहिए ।फांसी की सजा। मेरी बेटी को न्याय मिले"। मीडिया में कहा जा रहा है कि वे और मृतका रात के नौ साढ़े नौ बजे खेतों में घास काटने गई थीं, इस बाबत पूछने पर मृतका की मां, और बुआ ने साफ़ इंकार करते हुए कहा कि दिन के साढ़े नौ दस बजे थे। मृतका की मां ने बताया कि "उन तीनों ने साथ मिलकर पहले थोड़ी घास काटी। फिर बेटी ने कहा कि अम्मा तुम्हीं काटो घास ,मैं नहीं काटती ,मुझे बहुत प्यास लगी है। मैं पानी पीने जाउंगी।" मृतका की मां के कथनानुसार उसकी बात सुनकर उसने अपने बेटे को पानी लेने घर भेज दिया। इसके बाद दोनों घास काटने लगे। घास काटते-काटते वह कुछ दूर हो गई। बाजरे के खेतों में नीचे बैठकर घास काटने के कारण किसी को देख नहीं सकी जब मनीषा के साथ आपराधिक कृत्य को अंजाम दिया गया। उसकी मां ने बताया कि गले में पड़ी चुन्नी के साथ उसे खींचा गया तथा उसका गला घोंटा गया।

मृतका की बुआ ने बताया कि "ये ठाकुर कह रहें हैं कि हमारी बेटी के साथ कोई बुरा काम इन्होंने नहीं किया ,रीढ़ की हड्डी नहीं तोड़ी। पुलिस भी इन्हीं के साथ मिली है और ये अख़बार वाले भी। आप उस जगह एक बार जाकर देखें जहां मनीषा के साथ दरिंदगी हुई। बाजरे का पौधा आदमी से भी ऊँचा होता हैं। जिस जगह यह हुआ है, वहां सारे पौधे दबे पड़े हैं।" उसने सवालिया लहजे में कहा कि "क्या किसी एक आदमी से ऐसा हो सकता था?"

मृतका की बुआ ने मनीषा की माँ के हवाले से कहा कि कुछ देर बाद जब वह घास की ढेरी के पास पहुंची तो वहां मनीषा की एक चप्पल पड़ी थी, जिसे देखकर वह घबराई ।मनीषा को आवाज दी। वहां से सड़क तक आकर और गांव के एक बच्चे से मनीषा के बारे में पूछा कि क्या

मनीषा घर पर है। उस बच्चे ने पूछ कर बताया कि मनीषा घर पर नहीं है। तब वे उसी बच्चे को अपने बेटे को बुलाने का कहकर फिर से वहीं वापस उसे ढूंढने लगी तो पाया कि जहां एक चप्पल पड़ी है, वहीं से ऐसा लगा जैसे कुछ जबरदस्ती घसीटा गया है। जब वे वहां से थोड़ी दूर अंदर गई तो देखा कि मनीषा अचेत और घायल अर्धनग्न अवस्था में वहां पड़ी थी। बड़ी मुश्किल से परिजनों द्वारा उसे उठाकर थाना ले जाया गया तथा पुलिस को इसकी सूचना दी।

मृतका की मां ने बताया कि 14 सितंबर को थाने में भी पुलिस ने उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया। रिपोर्ट दर्ज करने में देरी की गयी तथा अस्पताल भेजने में भी। वहीं मृतका के भाई ने बताया कि अस्पताल में इलाज में कोतही बरती जा रही थी। वहीं मृतका की भाभी ने बताया कि जब हमें जानकारी मिली कि मनीषा की मौत हो गई है तो हमलोग उसका शव घर लाना चाहते थे पर पुलिस अधिकारी ने डांटते और धमकाते हुए कहा कि "कभी पोस्टमार्टम की हुई लाश देखी है? पता है तुम्हे कैसी होती है? तुम नहीं देख पाओगी। सब कुछ चीर-फाड़ रखा है। सब कुछ निकाल रखा है।"

मनीषा के माँ-पिता, बहन, भाई, भाभी और बुआ सबने कहा कि उनकी केवल एक ही मांग है कि दोषियों को जल्द से जल्द कठोर से कठोर सजा हो तांकि उनकी बेटी के साथ न्याय हो सके।

मृतका के घर में ही तैनात एक पुलिसकर्मी ने बताया कि आरोपी पक्ष के लोगों ने अभी कुछ दिन पहले भी हमला करने की कोशिश की गई थी। इसलिए इनकी सुरक्षा बढ़ाई गई है। अगर पुलिस वाले की बात सच है तो मनीषा की भाभी तथा पिता का भय बिलकुल वाजिब है, क्योंकि जब इतने पुलिस बल की मौजूदगी में आरोपी पक्ष के लोग हमला करके धमका सकते हैं तो वे पुलिस के नहीं रहने पर क्या नहीं कर सकते।

मनीषा के पिता ने हमें बताया कि उनके पांच बच्चे हैं जिनमें तीन लड़कियां और दो लडके हैं। मनीषा इनमें सबसे छोटी थी। दो लड़कियां और एक लड़का विवाहित है। उनके लड़के के यहाँ अभी तीसरी बेटी हुई है,जो घटना वाले दिन केवल 12 दिन की थी। परिवार की आर्थिक स्थिति पूछने पर उन्होंने बताया उनका जन-धन योजना के तहत खाता है, जो जीरो बैलेन्स पर खुलता है। इस घटना के बाद जो भी पैसा आया लड़की की मां के खाते में आया, जो कि अभी सील है, क्योंकि उसमे एक लाख से ज्यादा राशि नहीं रखा जा सकता है। दोनों बेटों का प्राइवेट काम था, वह भी छूट गया। परिवार की आर्थिक स्थिति बेहद चिंताजनक है।

परिवार के अन्य सदस्यों से बात करने पर कुछ ऐसी बाते भी सामने आई कि गांव में रहने वाले इन बाल्मीक परिवारों ने अपने पुश्तैनी धंधों को छोड़कर गांव से बाहर जा कर कमाना शुरू कर दिया था। वहीं कुछ सूअर पालन छोड़ भैंस, बकरी और मुर्गी पालन करते हैं। इन सबसे उनके जीवन स्तर में बदलाव आने लगा था। कदाचित यह मुमकिन है कि इस कारण भी आरोपी पक्ष पीड़ित पक्ष से ईर्ष्या रखता हो।

हमारी मौजूदगी में ही पीड़ित परिवार से वहां तैनात पुलिस अधिकारी ने दोपहर 2:30 बजे सम्बंधित कैसे की सुनवाई के लिए लखनऊ चलने के किये कहा। इस पर मृतका की भाभी ने स्पष्ट इंकार करते हुए कहा कि “हम अब नहीं जाएंगे, कल सुबह जल्दी जाएंगे। मुझे किसी पर विश्वास नहीं है। मेरे परिवार की जान को खतरा है। मुझे उनकी सुरक्षा चाहिए। पुलिस के बहुत कहने पर भी परिवार वाले शाम को जाने के लिए राज़ी नहीं हुए। पत्रकारों ने जब मृतका के परिवार से पूछा कि क्या पुलिसवालों ने पहले नहीं बताया कि आपको आज जाना है? क्या आप तैयार नहीं थे? मृतका के भाई का कहना था कि हम सुबह छह बजे से तैयार हैं। कोई नहीं आया ले जाने।

स्थितियों को और विस्तार से समझने के लिए हम गांव के अंदर गए, तो पाया कि गाँव में नालियां कच्ची हैं। जबकि ज्यादातर घर पक्के हैं। कुछ घर बनते हुए भी दिखे। गांव में अंदर की तरफ कुम्हारों और ठाकुरों के घर आमने-सामने हैं। किन्तु एक बड़ा अंतर इस गांव में यह दिखा कि दलितों के घर कुम्हारों के घरों से ज्यादा बड़े और पक्के दिखे। किन्तु जब हमने कुम्हार जाति की एक महिला से इस घटना के बारे में बात की तो उसने केवल इतना कहा कि "भंगियन की लड़की मार के जला दी है, हमें बस इतना पता है।" किसने जला दिया? यह पूछने पर उसने कहा "कहत हैं कि पुलिस ने जला दी बाकी हम तो उस तरफ जाते नहीं। इसलिए ज्यादा नहीं जानते।" सामने की तरफ अपनी चौखट में खड़ी स्त्री की ओर इशारा करके कहने लगी कि उनसे पूछ लो ..

कुछ घरों के सामने से गुजरते हुए वहां बने शौचालयों पर नज़र पड़ी, जो सरकारी योजना के तहत बनाए गए थे। उनका नाम दिया गया था- 'इज़्ज़त घर '। पढ़ते ही ज़ेहन में कई सवाल उभरे...इज्जत ? औरत ? दलित स्त्री??

वह स्त्री हमें देख कर अपने घर के गेट पर घुंघट करके खड़ी थी। उसने कहा कि "देखो जी, हम तो घर के बाहर भी नहीं निकलते। वो तो आप लोगों को जाते देखा तो आ गई। बाकी हमारे डोकर (पति) तो सारा दिन खेत में रहे। भंगियन के थोड़े से घर हैं। वे भी बाहर की तरफ। हमें उनसे क्या मतलब।"

वहीँ हमें ठाकुर परिवारों की कुछ लड़कियां पास लगे हैंडपंप से पानी भरती दिखीं। पोशाक से शहरी सभ्रांत दिखने वाली किशोरियों ने बताया कि वे दसवीं की छात्रा हैं जो गांव से 4 किलोमीटर दूर श्री जवाहर स्मारक इंटर कॉलेज में पढ़ने जाती हैं। गाँव में प्राथमिक स्तर की पाठशाला है, जिसमें केवल शिक्षकों का पदस्थापन है।

कुछ घरों के सामने से गुजरते हुए वहां बने शौचालयों पर नज़र पड़ी, जो सरकारी योजना के तहत बनाए गए थे। उनका नाम दिया गया था- 'इज़्ज़त घर '। पढ़ते ही ज़ेहन में कई सवाल उभरे...इज्जत ? औरत ? दलित स्त्री??

हमने वहां तैनात पुलिस कर्मियों से दुर्घटना स्थल तथा उस स्थान के विषय में भी जानना चाहा जहाँ मृतिका को बिना उसके परिवार की मर्ज़ी के जलाया गया था .किन्तु पुलिस ने दोनों ही स्थानों के विषय में जानकारी देने से यह कहते हुए इंकार कर दिया कि उनकी ड्यूटी रोज़ बदलती है कोई भी पुलिस कर्मी एक स्थान पर नहीं रहता . उनका यह तर्क हमें बेहद आश्चर्यजनक एवं हास्यास्पद लगा.

बूलगढ़ी गांव अन्य गांवों की अपेक्षा एक छोटा गांव हैं, लेकिन आर्थिक रूप से संपन्न गाँव है। गांव में ब्राह्मणों के घर सबसे ज्यादा समृद्ध दिखे, जिनमें कुछ घर पचौरी ब्राह्मणों के थे।

कुल मिलाकर गांव में जातीय वर्चस्व साफ़ तौर पर दिखा। इसकी शिकार महिलाएं भी थी। जातीय पितृसत्ता का प्रभाव कुम्हार तथा ठाकुर जाति की दोनों महिलाओं से बात करने पर भी स्पष्ट दिखा।
परिजनों तथा गांव के लोगों से बातचीत के अधार पर हम यह मांग करते हैं कि:

सरकार पीड़ित पक्ष के जान-माल की सुरक्षा सुनिश्चित करे। इसके लिए गांव में एक पुलिस चौकी की स्थापना हो।

सरकार पीड़ित पक्ष को तत्काल वित्तीय सहायता उपलब्ध कराए। उनके सामने रोजी-रोटी का संकट है।

सरकार बूलगढ़ी गांव में एक मृतका के नाम पर स्वास्थ्य केंद्र और हाई स्कूल की स्थापना करे।

देस हरियाणा प्राप्त करने के लिए संपर्क करें		
कुरुक्षेत्र	विकास साल्याण	9991878352
	योगेश शर्मा	9896957994
यमुनानगर	बी मदन मोहन	9416226930
अंबाला शहर	जयपाल	9466610508
करनाल	अरुण कैहरबा	9466220145
इंद्री	दयालचंद जास्ट	9466220146
घरौंडा	राधेश्याम भारतीय	9315382236
	नरेश सैनी	9896207547
जीन्द	मंगतराम शास्त्री	
टोहाना	बलवान सिंह	9466480812
नरवाना	सुरेश कुमार	9416232339
सोनीपत	विरेंद्र वीरू	9467668743
पानीपत	दीपचंद निर्मोही	9813632105
पंचकुला	सुरेंद्र पाल सिंह	9872890401
	जगदीश चन्द्र	9316120057
रोहतक	अविनाश सैनी	9416233992
भिवानी	का. ओमप्रकाश	9992702563
दादरी	नवरत्न पांडेय	9896224471
सिरसा	परमानंद शास्त्री	9416921622
हिसार	राजकुमार जांगड़ा	9416509374

देस हरियाणा प्राप्त करने के लिए संपर्क करें		
महेन्द्रगढ़	अमित मनोज	9416907290
मेवात	नफीस अहमद	7082290222
शिमला	एस आर हरनोट	1772625092
राजस्थान (परलीका)	विनोद स्वामी	8949012494
चंडीगढ़	ब्रजपाल	9996460447
	पंजाब बुक सेंटर, सैक्टर 22	
दिल्ली	संजना तिवारी , नजदीक श्रीराम सेंटर,	
	आर.के. मैगजीन , मौरिस नगर, थाने के सामने	
	एनएसडी बुक शॉप	
ई-प्राप्ति	www.noटीnu llcom/desharyana	